अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

सौर आषाढ़, २१ शक १८७९ | सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) | एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–४१ | 卐 राजघाट, काशी 卐 | शुक्रवार, १२ जुलाई, '५७

असंग्रही समाज का अर्थ !

लोग कहते हैं कि सारी दुनिया को ही यह शख्स 'बाबा' बनाने निकला है ! लेकिन आक्षेप लेने वाले लोग 'असंग्रही समाज' का अर्थ ही नहीं समझे हैं। बाबा के असंग्रही समाज के पाँच लक्षण हैं :

(१) समाज में प्राचुर्य रहेगा, लक्ष्मी विपुल रहेगी।

(२) लक्ष्मी का समान विभाजन, वितरण होगा।

(३) शराब, सिगरेट आदि निरर्थक चीजों का संग्रह नहीं रहेगा।

(४) क्रमयुक्त संग्रह रहेगा और वह क्रम इस तरह है :—उत्तम अन्न, उत्तम कपड़ा, उत्तम घर, उत्तम खेती के औजार और मनोरंजन के उत्तम साधन।

(५) पैसों का संग्रह कम-से-कम रहेगा।

असंग्रही समाज का यह चित्र देख कर आप आशा महसूस करते हैं या निराशा, देख लीजिये !

—विनोबा

सर्वोदय का कल्याण-मार्ग

(जयप्रकाश नारायण)

सर्वोदय एक प्रगतिशील, विकासशील विचार है। यह कोई रूढ़िवादी विचार नहीं है। इसका आधार सत्य है। अतः ज्यों-ज्यों सत्य का दर्शन होता जायगा, त्यों-त्यों इस विचार में विकास होता जायगा। सर्वोदय का मूल तत्त्व है, "सर्व-कल्याण की भावना।" कुछ लोगों का हित और कुछ का अहित चाहने वाले विचार से संघर्ष पैदा होता है। सर्वोदय का लक्ष्य सर्व-हित-साधन ही है और वह सामाजिक विषमता को जड़-मूल से नष्ट भी करना चाहता है। सामाजिक विषमता से उत्पन्न दुःख संक्रामक रोग की तरह कब किसको पकड़ लेगा, यह कहा नहीं जा सकता, इसलिए सर्वोदय का आदर्श ही श्रेयस्कर है। इस आदर्श की प्राप्ति हिंसा से संभव नहीं है, क्योंकि सर्वोदय का आधार है, सत्य। और सत्य के साथ शिव जुड़ा हुआ है, जो एक मंगलवाचक शब्द है। अतएव सर्वोदय के आदर्श तक पहुँचने के लिए हिंसा से, जो एक अमंगल-वाचक शब्द है, अलग ही रहना होगा; हिंसा की जगह अहिंसा का ही आश्रय लेना होगा और प्रेम की स्थापना करनी होगी।

हर देश के कुछ बुनियादी तत्त्व होते हैं। इस देश में सर्वोदय-आन्दोलन के रूप में ही वे तत्त्व प्रकट हुए हैं, परंतु विश्व-बन्धुत्व और विश्व-शान्ति के लिए सारे विश्व को भी अब उन बातों पर अमल करना होगा। आज हर देश में पूँजीवाद मिटाने का प्रयोग चल रहा है। कुछ देशों में यह प्रयोग वर्ग-संघर्ष के रूप में हुआ, पर वह असफल हुआ। उससे पूँजीवाद नहीं मिटा, सामाजिक विषमता कायम रही, यह सब जानते हैं। रूस में इस प्रयोग का नतीजा यह हुआ कि आज वहाँ ज़ार के जमाने से भी कम स्वतंत्रता है। ऐसा इसलिए हुआ कि वह प्रयोग हिंसा पर आधारित था ! आर्थिक विषमता भी वहाँ आज कायम है। रूस के उपप्रधान मंत्री ने अपने दिल्ली-आगमन के अवसर पर खुद स्वीकार किया था कि वहाँ लोगों की आमदनी में १ से ४० तक का फर्क है और यह फर्क श्रमिक वर्ग में नहीं, अनुत्पादक वर्ग में ही है। रूस के क्रान्तिकारियों ने समाज-परिवर्तन के लिए हिंसात्मक साधन अपनाये, यही इसका कारण है। हिंसा से समाज में मूल्य-परिवर्तन हो नहीं सकता और बिना मूल्य-परिवर्तन के समाज-परिवर्तन भी नहीं हो सकता। इसलिए गांधीजी ने समाज-परिवर्तन के लिए वैचारिक क्रान्ति का मार्ग बताया है।

पूँजीवादी समाज में व्यक्तिगत स्वार्थ और संग्रह के मूल्य प्रतिष्ठित होते हैं। गरीब और अमीर, दोनों इन सामाजिक मूल्यों को मान्यता देते हैं। अतः पूँजीवाद मिटाने के लिए इन मूल्यों को मिटाना जरूरी है। यह हिंसा या कानून से नहीं, प्रेमपूर्वक, विचार-परिवर्तन से ही संभव हो सकता है। **विचार-परिवर्तन के द्वारा जीवन-परिवर्तन और जीवन-परिवर्तन के द्वारा समाज-परिवर्तन, यही सर्वोदय का मार्ग है।** इस मार्ग पर अमल करने के लिए गांधीजी ने सत्याग्रह का विज्ञान हमारे समक्ष रखा है। आज विनोबाजी उन्हींके मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। सम्पत्ति समाज की है, यह विचार जनता को समझाने के लिए और इस पर उसके द्वारा आंशिक रूप से अमल कराने के लिए उन्होंने भूदान-आन्दोलन चलाया। अब ग्रामदान-आन्दोलन के मार्फत संपत्ति-विसर्जन का संपूर्ण विचार लोगों के सामने वे रख रहे हैं।

(छात्र-शिविर, मुजफ्फरपुर, २०-६-'५७)

जमीन, बागात और बाजारों का अनोखा दान !

गत २७ जून, १९५७ गुरुवार को इलाहाबाद जिले की मेजा तहसील के कठौली-विजयनगर ग्राम में श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह, राजा बहादुर मांडा ने एक अद्भुत दान की घोषणा की है। इस दान में उनकी और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सौभाग्यवती सीता कुमारी देवी की भूमि-सम्बन्धी सम्पत्ति शामिल है। इसमें बामपुर गांव की कछार वाली सीर की जमीन तथा अन्य गांवों में इन दोनों की जो जमीनें हैं, वे भी आ जाती हैं। इसके अलावा फूलपुर और मेजा तहसीलों में लगभग डेढ़ हजार बीघे बागात तथा सिरसा और भारतगंज के बाजारों का भी दान किया गया है। इस प्रकार लगभग बीस लाख रुपये की सम्पत्ति का दान राजा मांडा की ओर से किया गया है। इलाहाबाद जिले में ही नहीं, उत्तर-प्रदेश में विनोबाजी के ग्रामदान-आन्दोलन के लिए यह एक अनुपम और प्रेरणा-जनक भेंट है। राजासाहब का भाषण अन्यत्र है। —सुरेशराम भाई

भूदान-यज्ञ सफल कैसे हो ?

(प्यारेलाल नैयर)

भूदान-आंदोलन द्वारा गाँवों में एक अभूतपूर्व क्रांति की जा रही है। इस आंदोलन की सफलता के लिए ज्ञान तथा परिश्रम, इन दोनों चीजों की आवश्यकता है।

रचनात्मक कार्यकर्ता आज इस मामले में बिल्कुल दिवालिये हो गये हैं ! यह है उनके कार्य करने की शक्ति ! स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पहले रचनात्मक कार्यकर्ता इतने सक्रिय थे कि सरकारी योजनाएँ विपुल धन-राशि के बावजूद ठप्प हो जाती थीं, जब कि रचनात्मक कार्यकर्ता कार्य करने के अपूर्व जोश में उन्हें पहले ही पूरा कर लेते थे। रचनात्मक कार्यकर्ताओं में आज घोर निष्क्रियता आ गयी है, जिसे शीघ्र ही दूर किया जाना चाहिए। हमें आम जनता में जागृति लानी है; उनके दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन लाना है; सामाजिक मान्यताओं को हमें बदलना है, आम जनता के हृदय व दिमाग का परिवर्तन करना है। **पूंजीवादी तत्त्वों के प्रभुत्व को समाप्त करने का सबसे आसान तरीका यह है कि उन पर बिलकुल निर्भर न रहा जाय, उनका बिलकुल बहिष्कार किया जाय और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अपनी उत्पादित वस्तुओं से की जाय।** महात्मा गांधी ने यह सुझाव दिया था कि काँग्रेस को लोकसेवक-संघ के रूप में परिवर्तित हो जाना चाहिए। आज आवश्यकता इस बात की है कि गरीब-से-गरीब व निम्न स्तर के व्यक्तियों की आवश्यकताओं को महसूस किया जाय और उन्हें दूर करने का भरसक प्रयत्न किया जाय। इसमें परिश्रम और लगन की आवश्यकता है। इसके बिना कोई आन्दोलन सफल नहीं हो सकता।*

*अ. भा. भूदान-अखंड-पदयात्रा की उत्तर प्रदेश-यात्रा में, आगरा, ता. २।७।'५७

www.vinoba.in

जीवन-परिवर्तन हरेक को करना है

(विनोबा)

प्रश्न : श्री शंकररावजी, श्री जयप्रकाशजी आदि सर्वोदय के बड़े-बड़े कार्यकर्ता यहाँ आये थे। अब आप भी आये हैं। फिर भी यहाँ के जमीदारों का कोई परिवर्तन नहीं हुआ। ऐसी जगह में भूदान-आंदोलन का आगे का कार्यक्रम क्या होगा ?

विनोबा : बड़ा ही अज्ञानी सवाल है। यहाँ बड़े जमीनवाले होंगे तो भी कितने ? और क्या केवल उनका ही परिवर्तन करना हमारा काम है ? बाकी सबका हृदय, क्या जैसा चाहिए, ठीक वैसा ही है ? क्या वह बिलकुल पवित्र और शुद्ध है ? यदि ऐसा ही खयाल हो, तो वह बिलकुल गलत है। हमको दूसरों का हृदय-परिवर्तन नहीं करना है, हमको अपना ही परिवर्तन करना है ! जो धर्म होता है, वह क्या चंद लोगों के लिए होता है ? वह सबके लिए होता है। धर्म की यही कसौटी है। दया, प्रेम, सत्य, संयम सबको चाहिए। यह भूदान-संपत्तिदान का कर्तव्य चंद लोगों को लागू नहीं होता, वह सबको त्याग करने का मौका देता है। यह कहना कितना अहंकार है कि हमको चंद लोगों का ही परिवर्तन करना है ! जिसके पास जो भी कुछ है, वह उसमें से कुछ अंश समाज को समर्पण करेगा। यदि हरेक शिक्षित मनुष्य अपनी बुद्धि का दान देकर रोज एक घंटा भी गाँव वालों को सिखाता है, तो १० साल में सारा गाँव शिक्षित बन सकता है। रोज आधा घंटा कातते हैं, तो बच्चे भी साल में २४ गुंडी देश को समर्पण कर सकते हैं। इसलिए ऐसा कोई भी अभागा भगवान् ने पैदा नहीं किया, जिसके पास देने के लिए कुछ भी नहीं है। बच्चे, बूढ़े, भाई, बहन—सबको देश के लिए कुछ-न-कुछ देना है, यह सर्वोदय का विचार है।

आखिर जीवन का परिवर्तन करना है, याने हरेक मनुष्य का ही परिवर्तन होना चाहिए। सिर्फ जमींदारों का नहीं ! यह तो कम्युनिस्टों का विचार है कि "जमींदारों से, श्रीमानों से छीनना है और गरीबों को देना है, गरीब दया का पात्र है।" पर हम यह नहीं मानते। हम मानते हैं कि गरीब और मध्यम-वर्ग को भी त्याग करना है। वह हरेक के लिए जरूरी साधना है। अपने घर से बीज बाहर निकाले बिना फसल नहीं आती। त्याग-रूपी बीज बोयेंगे, तभी लक्ष्मी पैदा होगी। क्या गरीब लोग लक्ष्मी नहीं चाहते ? अगर चाहते हैं, तो उनको त्याग भी करना चाहिए। पर उनको तो सिखाया गया है, "तुम गरीब हो ! तुम माँगो ! या तो दया माँगो या छीन कर लो।" हम यह नहीं मानते। हम कहते हैं कि गरीबों को भी देना है। वे देते हैं, तो नैतिक हवा पैदा होती है और वह सबको छूती है।

आज कोई अपनी छोटी चीज की मालिकी मानता है; तो कोई बड़ी चीज की। सबका एक ही 'क्लास' है। तो 'क्लास-स्ट्रगल' होगा कहाँ से ? देहासक्ति किसको नहीं है ? मालकियत की भी आसक्ति किसको नहीं है ? वह गरीब को है और श्रीमानों को भी है ! अतः यह खयाल मत रखिये कि हमको चंद लोगों का ही हृदय-परिवर्तन करना है। सारे समाज में अगर यह लोभ-वृत्ति है, तो सारे समाज का परिवर्तन हमको करना है। अतः हमारा जीवन समाज के लिए है, यह हमारी भावना होनी चाहिए। जयप्रकाश, शंकरराव देव, बाबा आदि क्या चंद्र, सूर्य से भी बड़े हैं ? सूर्य, चंद्र, पानी का तो दर्शन रोज होता है ! फिर भी हृदय-परिवर्तन नहीं होता ! जो काम सूर्य-प्रकाश से नहीं हुआ, वह जयप्रकाश से होगा, यह कैसी अपेक्षा कर सकते हैं ? वे आये और गये। बाबा भी आज आया और कल चला जायगा !

पर शक्ति कहाँ से पैदा होती है ? अपने में से, अंतरात्मा से ! हम ही सुधर जायँ, शुद्ध-पवित्र बनें, त्याग करें। हृदय करुणा से भरा है, सब पर प्रेम करते हैं, तो हमारे इर्दगिर्द हवा पैदा होती है। फिर उसका असर होता है। तो सवाल यह पूछना चाहिए कि "यहाँ जयप्रकाश आये, शंकरराव देव आये, अब बाबा आया है, तो "मैंने" क्या किया ? मेरा हृदय-परिवर्तन नहीं हुआ हो, तो उन लोगों का आना व्यर्थ हुआ।" घर के एक मनुष्य का परिवर्तन होता है, तो उसका असर परिवार पर होता है, पड़ोसी पर होता है। दीपक से दीपक लगता है। यहाँ दीपक ही नहीं है, तो उसके स्पर्श से दीपक कैसे लग सकते हैं ? आप सोचते हैं, जयप्रकाश आये हैं, तो कुछ-न-कुछ करना होगा ! नहीं होगा, तो छीनने की योजना करनी होगी। याने यह आंदोलन याने छीनने की तैयारी है, ऐसा समझते हैं, "यह आंदोलन याने 'फर्स्ट स्टेप' सफल नहीं होगी, तो धमकायेंगे, पीटेंगे, नहीं तो सत्याग्रह तो भी करेंगे !" पर सत्याग्रही हैं भी कितने ? २-४ भी हैं ? क्या सब सत्यनिष्ठ हैं ? उनका क्या लक्षण है ? वे तो खाते हैं, पीते हैं, रात को सोते हैं, झूठ बोलते हैं और काम की चोरी भी करते हैं। फिर मालिक भी दाम की चोरी करता है। क्या यही है सत्याग्रही का नमूना ? इसलिए जीवन-सुधार हरेक को करना होगा और यह आंदोलन जीवन-शुद्धि के लिए ही है। पानी क्या करता है ? नीचे-नीचे उतरता है। तो वैसे ही हमसे जो दुखी हैं, गरीब हैं, उनकी मदद में हमको दौड़ कर जाना चाहिए। जो दौड़े जाते हैं, उनकी मदद में ऊपर वाले फिर आते हैं। पानी बहता है, तो क्या गढ़ा पड़ता है ? ऊपर से पानी आते ही रहता है, नदी अखंड बहती रहती है। इसलिए हमारे पास का धन हम दूसरों के पास ढकेल देते हैं, तो वह बहते ही रहेगा। इसमें किसी एक जमींदार का या श्रीमान् का सवाल नहीं है, यह हमारी वृत्ति का ही सवाल है !

(चावकाड, त्रिचुर, २०-६-५७)

भूदान 'दान' नहीं, 'हक' का बँटवारा है !

(विश्वनाथ प्रतापसिंह, राजा साहब-मांडा, इलाहाबाद)

[इलाहाबाद जिला विद्यार्थी ग्रामदान-शिविर का अंतिम-समारोह कठौली-विजयनगर (गड़ेवड़ा) ग्राम में गत २७ जून को हुआ। उसकी अध्यक्षता इलाहाबाद जिले के प्रमुख रईस, श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह, राजा मांडा ने की। राजा साहब २६ वर्ष के नवयुवक हैं और हमारे सहयोगी बनने जा रहे हैं। अपने भाषण में उन्होंने अपनी खुद की जमीन, बगीचे और बाजारों के दान की घोषणा की। उस अवसर पर राजा बहादुर ने जो व्याख्यान दिया, उसका सारांश यहाँ दे रहे हैं। —सुरेशराम]

आपका जो दो दिन का शिविर १८-१९ जून को हुआ था, उसमें मैंने ही सबमें ज्यादा दान, विचार-दान पाया है। कठौली ग्रामवासियों से और विशेषकर हरिजन बंधुओं से भी प्रेम का हमें ऐसा दान मिला, जो हम सदा याद रखेंगे। इलाहाबाद के सर्वोदय-परिवार के मित्रों ने जो मुझे अपनाया है, उसके लिए बहुत आभारी हूँ। श्री विनोबा की प्रेरणा देश में नवजीवन का संचार कर रही है। ग्रामराज-ग्रामदान का आंदोलन अवश्य सफल होगा। अभी जिस भूदान की मैंने घोषणा की है, उसके बारे में मेरे मन का निर्णय लगभग डेढ़ बरस पहले हो गया था। लेकिन वह प्रेरणा सक्रिय रूप अब ले पायी है। आज जो हम भूदान कर रहे हैं, इसे आप दान मत समझिये। जिनका हक है, वही हम चुका रहे हैं। भूदान और ग्रामदान ऐसे दान हैं, जिनसे आगे दान का ही अंत होगा। संत विनोबा ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते हैं, जिसमें विषमता और दारिद्र्य नहीं होगा। साम्ययोग के आधार पर सारी रचना चलेगी।

मेरी अपनी कोई व्यक्तिगत हस्ती नहीं है। हर मनुष्य में दोष होते हैं। मुझमें भी हैं। मेरी व्यक्तिगत बुराई की ओर आप ध्यान न दें। मेरे अंदर विनोबाजी के संदेश ने जो श्रद्धा जाग्रत की है, उसीको प्रगट कर रहा हूँ। हम नमक किसका खाते हैं ? जो मेहनत करता है, उसका। चाहे वह मेहनत भूमि पर की जाय या अन्य जगह। भूमि पर किसीका नाम-नंबर दर्ज नहीं होता। भगवान् ने पट्टे करके नहीं भेजे। यह इन्सान की करतूत है, जो इन्सान को इन्सान से ही अलग करती है। भगवान् ने भूमि सबको मुफ्त दी है। इसलिए मुफ्त और प्रेम से इसका बँटवारा होना चाहिए और जो परिश्रम करता है, वही उसके फल का अधिकारी है। हमारे जीवन में परिश्रम को प्रधान स्थान मिलना चाहिए। दूसरे के परिश्रम का नाजायज फायदा हम न उठायें। इस प्रकार जब नया समाज बनेगा, तभी मंगलमय आनंद सबको प्राप्त होगा।

श्रमयुक्त जीवन के बिना कल्याण नहीं है। इस आदर्श से मैं स्वयं बहुत दूर हूँ, लेकिन आज इस तरफ एक छोटा-सा कदम जरूर उठा रहा हूँ। ईश्वर से प्रार्थना है कि यहाँ के सर्वोदय-परिवार से जो प्रेरणा मुझे मिली है, उसके अनुकूल जीवन बना कर आदर्श के निकट पहुँच सकूँ।

हमने भूदान : ग्रामदान-आंदोलन शुरू किया। आरंभ में पुरोहित का यह काम हमने किया। लेकिन अब कहाँ तक और कितना हम करते रहेंगे ? यह काम अब सबको उठा लेना है। नौजवान लोगों के सामने तो यह क्रांति का आवाहन ही है !

(कुन्नंकुलं, त्रिचुर, १९-६-'५७) —विनोबा

www.vinoba.in

देश में परिव्राजक क्यों और कैसे चाहिए ?

(विनोबा)

इन सौ वर्षों के अंदर हिंदुस्तान में कई युनीवर्सिटियाँ बढ़ी हैं, तो लोग समझते हैं कि हिंदुस्तान में तब से कुछ-न-कुछ ज्ञान का प्रचार बढ़ा है ! यह बात ठीक है कि हिंदुस्तान के कुछ लोगों को, कुछ वर्गों को ऊंची तालीम मिली और युनीवर्सिटियों के जरिये दुनिया का भी कुछ ज्ञान यहाँ बढ़ा। परंतु हमारी दूसरी एक बहुत बड़ी चीज भी हमने उसके साथ-साथ ही खोयी। हमारे यहाँ केंद्रित विश्वविद्यालय नहीं थे, परंतु चलती-फिरती युनीवर्सिटियाँ बहुत थीं। केंद्रित युनीवर्सिटियाँ भी थीं, परंतु देश में ज्ञान-प्रचार का आधार उन युनीवर्सिटियों पर नहीं, बल्कि परिव्राजक-वर्ग पर था। यह परिव्राजक-संस्था हिंदुस्तान की बहुत बड़ी संस्था है। शंकराचार्य, रामानुज, बुद्ध, महावीर आदि महापुरुषों ने जो भी ज्ञान-प्रचार किया, परिव्राजक-वर्ग खड़ा करके ही किया। वस्तुतः कुल देश के कोने-कोने में, घर-घर में ज्ञान देने के लिए घूमते परिव्राजकों की ही जरूरत रहती है। भूदान-आंदोलन में जो भी थोड़ा प्रचार हुआ है, वह घूमने वालों के जरिये हुआ है।

आज कुछ लोग घूम रहे हैं, जो लगन और उत्साह में घूम रहे हैं। परंतु साल-दो साल का समय देने की भावना से वे घूम रहे हैं। वे सतत घूमने वाले नहीं हैं। यह उनका दोष भी नहीं है। कुछ लोग ऐसे होंगे ही, जो गृहस्थ-धर्म में रह कर ही समाज के लिए थोड़ा समय दें। परंतु सतत ज्ञान पहुँचाने का काम थोड़े-से घूमने वाले लोगों से नहीं होगा। वास्तव में वे परिव्राजक नहीं, प्रचारक हैं। प्रचारक का काम और आवेश क्षणिक होता है और परिव्राजक ज्ञाननिष्ठ, क्रांतिनिष्ठ और लोकनिष्ठ होते हैं। वे यह गिनती नहीं करते कि हम कितने घूमे और घूमने के कितने दिन बाकी रहे! बल्कि लोगों में जाकर ज्ञान पहुँचाना ही उनका जीवन-कार्य बन जाता है।

भूदान बुनियादी आंदोलन है। उसके पीछे सर्वोदय का गहन तत्त्वज्ञान है। अतः वह विचार जन-जन में पहुँचाने के लिए निरंतर घूमने वाले ज्ञाननिष्ठ परिव्राजक ही चाहिए और इस तरह के परिव्राजक निर्माण होंगे, इसमें हमें संशय भी नहीं है। वे निकलेंगे भी इन्हीं प्रचारकों में से ! आज जो प्रचारक हैं, थोड़े ही दिनों में उनकी निष्ठा स्थिर होगी। चूँकि यह काम गहरा है, इसलिए हमें थोड़े दिन ही काम करने की बात नहीं करनी है। इसका एक हिस्सा पूरा होगा, तो दूसरे का आरंभ तुरंत होगा। कार्य में से कार्य निकलता ही चला जायगा। शाखाएँ-फूल-फल की तरह यह कार्य बढ़ता चला जायगा और जब परिपक्व फल तैयार होगा, तभी कार्य पूरा होगा। किसान तब तक विश्रांति नहीं लेता है, जब तक वृक्ष पूरा रूप नहीं ले लेता है। ज्ञान-प्रचारकों का भी तब तक समाधान नहीं होगा, जब तक लोगों को ज्ञान नहीं हुआ होगा। इसलिए हमारी नजर परिव्राजकों की तरफ ज्यादा रहती है। देश में ३०० जिले हैं और ३६ करोड़ लोग हैं, तो क्या ३००० भी परिव्राजक ३०० जिले के लिए नहीं चाहिए ? यह क्या भारी माँग है ? परंतु आज ऐसी हालत है कि लोग भोगपरायण बन गये हैं। घर-संसार में बहुत सुख है, ऐसा नहीं, फिर भी सुखासक्ति है ! इस वास्ते वैराग्यशील, क्रांतिनिष्ठ लोग कम हैं। अतः हमारा ध्यान विचार-प्रचार तक ही समिति नहीं है, परिव्राजकों की निर्मिति पर वह ज्यादह केंद्रित है।

हमारे देश में धर्म-निष्ठा बहुत है, परंतु पुराने ढंग की धर्मनिष्ठा आज बेकार है। वह तांत्रिक बन गयी है। उसको कर्मकांड का रूप आ गया है। एक मंदिर होता है, उसमें एक मूर्ति रहती है और आस-पास थोड़े-से लोग रहते हैं। उसीके इर्दगिर्द भक्ति चलती है। पर लोकजीवन को भक्ति छूती ही नहीं ! लोकजीवन पर तो दूसरी ही चीजों का असर, आक्रमण हो रहा है। बीड़ी है, शौकीनी है, आलस है, जड़ता है, रात्री-जागरण है, सिनेमा है। इस तरह सारे जीवन पर सब तरफ से आक्रमण हो रहा है। लोग देरी से सोते हैं और देरी से उठते हैं, जिससे राष्ट्र भी दुर्बल बनता है। ऐसा नहीं होता, तो बुद्धि भी पराक्रमी होती। चाय भी बढ़ गयी है। पेट में जितना तेल नहीं जाता होगा, उससे ज्यादा सिर पर तेल डालते हैं ! वह भी बाजार का खरीदा हुआ गंदा तेल होता है। परिणामस्वरूप जवानी में ही बाल पक जाते हैं। इस तरह अनेक बुरी चीजों से जीवन भर गया है। पाँच-पचास साल पहले जितनी नियमितता थी, उतनी आज नहीं है। दस गुना घड़ियाँ बढ़ी हैं, पर लोग समय आलस में बिता रहे हैं ! कुछ अच्छी चीजें भी हैं, पर उनका नाम हम यहाँ नहीं लेते, क्योंकि हम बता रहे हैं कि देश के जीवन में कितना विचित्र परिवर्तन हो रहा है ! इस पर धर्म-संस्था का, भक्ति का कोई असर ही नहीं ! भक्ति मंदिर के इर्दगिर्द पड़ी है। वह लोगों के काम ही नहीं आती। परंतु इसी भक्ति के नाम पर तो शंकराचार्य देश भर घूमते थे ! आज कोई घूमता है ? धर्म-संस्था का लोकजीवन पर क्या असर रहा है ? इसलिए धर्म बिलकुल चेतनहीन बन गया है। फिर मामूली-सी बातें—जैसे गंदे सिनेमा—उन पर भी वे रोक लगाने की ताक़त नहीं रखते ! निंदा सब करते हैं, परंतु नियंत्रण करने की शक्ति नहीं है। पर यह सब कौन सोचेगा ? इन सब बातों का ज्ञान जनता तक कौन पहुँचायेगा ? लोग दूसरों का देख-देख कर ही काम करते हैं। इसलिए परिव्राजक-वर्ग चाहिए और उनमें ज्ञान-निष्ठा के साथ-साथ श्रमनिष्ठा भी होनी चाहिए। गाँव-गाँव जायें, लोगों के साथ श्रम भी करें और ज्ञान भी दें। उत्साही लोग निकल पड़ेंगे, तो ग्रामदान क्या है, मालकियत मिटाना क्या है, यह लोगों को समझाने के लिए देर नहीं लगेगी। आज ग्रामों में तो स्वराज्य है ही नहीं। बाजार-भाव को सारा गांव वश है। मान लो कि लड़ाई छिड़ जाय और अनाज के भाव बढ़ जायँ, तो किस तरह अपने को बचायेंगे ? उसके लिए यही उपाय है कि सब एक हो जायँ, मिल कर खेती करें और योजना बनायें कि गाँव में कोई भी भूखा नहीं रहेगा, भूमिहीन नहीं रहेगा। इस तरह अपना-अपना समाज सम्भाल लेंगे, तो हिंदुस्तान सुखी होगा।

भावना ऐसी ही चाहिए कि सारे जीवन भर यही कार्य करना है। "५७ का साल है, इसीलिए कुछ करना है," ऐसा कहने से अब नहीं चलेगा और न सुख-प्रिय लोगों से ज्ञान-प्रचार होगा ! जनता पहचानती है कि कौन पोल है और कौन ठोस ! अगर जमीन पर गेंद पटकते हैं, तो उसको जमीन ऊपर फेंक देती है, क्योंकि जमीन जानती है कि वह पोल है। लेकिन कुदाल से जमीन पर प्रहार करें, तो जमीन उसको अंदर लेती है, फेंकती नहीं ! इसी तरह गेंद के माफिक कार्यकर्ता हों, तो जनता उनको फेंक देगी। '५७ साल की भी राह देखनी नहीं पड़ेगी, आज ही फेंक देगी ! क्योंकि वह पोल है न ? लोग पूछेंगे, जमीन की मालिकी हमको मिटाने के लिए कहता है और स्वयं मालकियत रखता है ! तो आज सही विचार मनुष्यों के पास पहुँचाने के लिए सही मनुष्यों की जरूरत है। यह क्रांति-कार्य है। यह समझ लीजिये कि हम क्रांति के नजदीक आ भी गये हैं। अतः अब ठोस विचार के परिव्राजकों की ज्यादा जरूरत है। लोग संकल्प करें और थोड़ी योजना के साथ निकल पड़े, तो काम जल्दी होने ही वाला है !

(कुत्तनुर, पालघाट, ६-७-'५७)

—

नये देवता, नयी मूर्ति और नये वाहन !

(धीरेंद्र मजूमदार)

सन् '४४ के अंत में गांधीजी जब जेल से छूट कर आये, तो हम सब लोग सेवाग्राम में एकत्रित हुए थे। नयी तालीम पर रोज चर्चाएँ होती थीं। उसी दौरान में नयी तालीम-सम्मेलन भी सेवाग्राम में हुआ। उस समय गांधीजी ने कहा था कि नयी तालीम की जिम्मेदारी है कि हर समय उपस्थित होनेवाली समस्याओंका समाधान करते रहे। हर युग में नयी-नयी समस्याएँ खड़ी होती हैं। कालपुरुष किसीकी राह देखते बैठा नहीं रहता। वह तो काल के साथ ही चलता है। वह हमेशा नयी परिस्थियों से भी गुजरता है। समाज की विभिन्न परिस्थितियों में मार्गदर्शन करने की जिम्मेदारी किसी-न-किसी रूप में प्राचीन काल से आज तक तालीम की ही रही है। स्वभावतः आज के विश्व की नयी परिस्थितियों के कारण ही नयी तालीम की आवश्यकता हुई। इसलिए तालीम का कोई स्थिर रूप नहीं हो सकता। चिर-परिवर्तनशील काल के साथ-साथ वह भी निरन्तर परिवर्तनशील है। यही कारण है कि विनोबाजी ने नयी तालीम का नाम "नित्य-नयी-तालीम" रखा है।

अतः पिछले १८ साल से हम सब जिस प्रकार नयी तालीम की साधना करते आये हैं, उस प्रकार से काम करने से आज समस्या हल नहीं होगी, क्योंकि १८ साल पहले काल-देवता की जो माँग थी, वह आज नहीं है। आज की माँग उससे भिन्न है। तालीम की पिछली साधना के साथ-साथ हमने कुछ कर्मकांड भी मुकर्रर किये थे, जो आवश्यक भी थे। ऐसे कर्मकांडों की आवश्यकता आगे भी होगी। कर्मकांड याने दिनचर्या का कुछ कार्यक्रम और स्वरूप, कुछ पाठ्यक्रम और कुछ अभ्यास-क्रम। पर देवता के स्वरूप-परिवर्तन के साथ-साथ उसकी मूर्ति को भी नये साँचे में ढालना पड़ता है, नये रूप के वाहन भी खोजने पड़ते हैं, बल्कि पुराने देवता की पूजा-समाप्ति के साथ उस मूर्ति को वाहन-सहित विसर्जन भी करना पड़ता है !

आज के युग की मांग अंत्योदय की माँग है। आज राष्ट्रीय-विकास की और जीवन-मान ऊँचा करने की चर्चाएँ काफी चलती हैं, लेकिन जिस दृष्टि और दिश

www.vinoba.in

में हम विचार कर रहे हैं, उससे क्या उस अत्यंत पिछड़े हुए मनुष्य का समाधान होगा ? आखिर हम जीवन-मान किसका ऊँचा करना चाहते हैं ? अगर बिरला की आमदनी शत्-प्रतिशत् बढ़ जाय और घुरहू माँझी की आमदनी पाँच प्रतिशत घट कर भी देश का 'औसत' ऊपर उठ जाय, तो क्या उससे हमें संतोष होगा ? विश्व के सामने इस प्रकार 'औसत' वाली राष्ट्रीय उन्नति का इज़हार करके हम अपने पुरुषार्थ का यश भले ही पा लें; लेकिन जमाना इसे पुरुषार्थ नहीं मानेगा, क्योंकि पुरुष प्रकृति का भी नियामक होता है। जब मैं राष्ट्रीयऔसत की बात सुनता हूँ, तो मुझे बचपन की एक कहानी याद आती है। एक पंडित अपने तीन बच्चों के साथ यजमान के घर जा रहे थे। बीच में नदी थी। उन्होंने अपने बच्चों की ऊँचाई नाप कर 'औसत' निकाल ली; पानी भी नाप लिया और समझ लिया कि सब बच्चे पार हो जायेंगे। उस पार जाकर देखा कि छोटा बच्चा गायब है! पंडित परेशान हुआ कि बच्चा कहाँ भाग गया ? आसपास के लोगों ने कहा कि बच्चा डूब गया! पंडितजी कागज-पेंसिल लेकर हिसाब लगाने लगे। लोगों से कहा, "बच्चा डूब ही नहीं सकता है। देखो, इधर-उधर कहीं होगा।" बदकिस्मती से हमारे राष्ट्र की योजना भी ऐसे ही पंडितों के हाथ में है। पर उससे हमारा काम नहीं चलेगा, याने नयी तालीम का काम पंडिताई से नहीं चलेगा! उसका वाहन द्रष्टा पुरुष ही हो सकता है, जो तमाम योजनाओं के कोलाहल के भीतर से 'अंत्य' का दर्शन कर सके। पंडित भी हमें जरूर चाहिए, बशर्ते कि वह काल-प्रवाह का द्रष्टा हो।

अतः जिस तरह राष्ट्रीय योजना बनाने वाले राष्ट्र के जीवन-मान के बारे में एक लक्ष्य स्थिर करते हैं, उसी तरह नयी तालीम वालों को नयी तालीम के जीवन-मान के बारे में कुछ निर्णय करना होगा। मैं मानता हूँ कि आप इसे भली भाँति कर सकेंगे।

मैंने अभी कहा था कि नये इष्ट देवता के लिए नयी मूर्ति और नया वाहन चाहिए। आपको यह भी सोचना होगा कि आज तक हम जिस तरह बुनियादी शाला, उत्तर-बुनियादी शाला आदि चलाते रहे हैं, उससे आगे काम कैसे चलेगा ? निस्संदेह वह नहीं चलेगा। हमारी पुराने किस्म की शालाओं में 'अंत्य' पुरुष के बच्चे नहीं आयेंगे, क्योंकि जिन्दा रहने के लिए उस घर भर के बच्चे-बूढ़े-सबको निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। वे अपने बच्चों को शालाओं में जाकर शिक्षा पाने का अवसर कैसे दे सकेंगे ? अतः उन्हें तालीम देकर अगर उनका आर्थिक सांस्कृतिक, बौद्धिक, राजनैतिक और नैतिक जीवन-मान ऊपर उठाना है, तो वे जहाँ कहीं अपने जीवन-संघर्ष में लगे हैं, वहीं आपको पहुँचना है। याने अब नयी तालीम को शाला की चहारदीवारी में बांध कर आप नहीं रख सकेंगे। गाँवों में नयी तालीम की शालाएँ खोलने का युग समाप्त हुआ। अब गाँव को ही नयी तालीम की शाला बनाने का युग आया है! भूदान-आन्दोलन के सहज नतीजे से ग्रामदान की जो धारा फूट रही है, उस कारण इस आवश्यकता की तीव्रता और भी बढ़ गयी है। इसलिए आपको शाला की नयी मूर्ति की रूपरेखा का निर्णय करना होगा। इसके लिए नये वाहन यानी शिक्षक के बारे में भी सोचना होगा।*

*सेवापुरी के क्षेत्रिय तालीमी-संमेलन पर किये हुए भाषण से।

...ऐटम बम का युग अमेरिका ने शुरू किया। रशिया ने आत्म-रक्षा के लिए इस चुनौती को स्वीकार किया और अब ब्रिटेन भी इस दानवी परिवार में शरीक हुआ है। अब अमीर और गरीब का भेद नहीं रहा। अब सवाल सधन-निर्धन का नहीं है, अब तो जीवनवादी और विनाशवादी, ऐसे दो गुटों में दुनिया का बँटवारा हो चुका है। इसमें दुनिया की सरकारें लाचार हो गयी हैं। इसलिए नये युग का उद्घोष है—People of the world unite ऐ विश्वप्रजा के लोगो, एकत्र होकर बचने का उपाय ढूँढ़ लो। जिस ढंग का जीवन आज तक जी रहे हैं, वह मौत की ही तैयारी करता है। अब अगर जीना है, विनाश से बचना है, तो जीने का ढंग बदलना ही चाहिए। कोलम्बो में जो लोग इकट्ठा हुए, वे सब देशों के सब तरह के लोग थे। उन्होंने जो प्रस्ताव पास किये हैं, अच्छे हैं; लेकिन जीवन-परिवर्तन की बात उसमें नहीं है। जब प्रजा की बुद्धि अन्तर्मुख होगी, तभी सच्चा रास्ता मिलेगा। लोग भेद भूल कर इकट्ठा हो रहे हैं, यही बड़ा शुभ लक्षण है। इसीमें से रास्ता निकल आयेगा।

—काका कालेलकर

ग्रामदान : भगवान् का काम !

(बाबा राघवदास)

मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र में ता. १०–६–'५७ से पदयात्रा आरंभ हुई। मित्रों ने वहाँ कार्यक्रम रखा था। वहाँ एक-दो मास पूर्व वे ग्रामदान की चर्चा भी कर आये थे। उनको विश्वास था कि थोड़ा और प्रयत्न करने पर उसमें सफलता मिलेगी। पर भगवान् मनुष्य का अभिमान पसन्द नहीं करते हैं। वे उसको शून्य बन कर कार्य करने का पाठ पढ़ाना चाहते हैं। इसलिए निमाड़ जिले के उन गाँवों में, जहाँ पहले प्रयत्न हुआ था, वहाँ जैसी मिलनी चाहिए थी, सफलता नहीं मिली है एवं पूरा ग्रामदान नहीं हुआ है। पर व्यक्तिगत मालकियत-निरसन के संकल्प अवश्य हुए। २६–६–'५७ को जहाँ पड़ाव था, बहुत आशा थी कि ग्रामदान होगा, परंतु एक भाई के ढीले पड़ जाने से वह पूरी नहीं हुई। स्थानीय कार्यकर्ता रात भर जाग कर उसके लिए प्रयत्न करते रहे। प्रातःकाल जोरों से वर्षा हो रही थी। थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के बाद दूसरे पड़ाव के लिए रवाना हुए। बारिश जारी थी। दो मील पर ही जलपान का दूसरा पड़ाव था। वर्षा के कारण कम भाई आये थे। पर जो आये थे, वे गाँव के मुखिया, पटेल और जिम्मेवार लोग थे।

ग्रामदान-भजन के बाद मैं बोला। उसके बाद एक आदिवासी भाई ने मेरे भाषण का भाव उपस्थित भाइयों को आदिवासी (बारेली) भाषा में समझाया। **तुरंत इस "वझर" गाँव के पटेल, सरपंच आदि मुखिया राजी हुए कि हमारे गाँव का ग्रामदान करेंगे। दान-पत्र भरना प्रारंभ हुआ। पाँच दानपत्र लिखे गये। पटेल तथा मुखिया ने वादा किया कि गाँव के जो १०३ खातेदार हैं, उन सबको समझा कर सारे दान-पत्र भरवा देंगे।** एक भाई ने कहा, "यहाँ पास में ही श्री हनुमानजी का प्राचीन स्थान है। वहाँ हम सब चलें और नारियल का प्रसाद चढ़ावें। आज खुशी का दिन है। मंगल-कार्य हुआ है।" गाँव वालों की भावना देख गाँव के पटेल व मुखिया के साथ हम सब भी मंदिर में गये। वहाँ प्राचीन काल की और दो मूर्तियाँ थीं। पटेल ने प्रेम, उत्साह और भक्तिभाव से नारियल फोड़ा, श्री हनुमानजी को प्रसाद चढ़ाया और सभी लोगों को वह बाँटा।

श्री खोड़ेजी विदाई के समय गाँव के पटेल से कहने लगे कि आप लोग किससे डरिये नहीं। कुछ बात हो, तो मुझे कहिये, आदि। **इस पर गाँव के सरपंच बोले, "हम किसीसे डरेंगे क्यों ? हम तो भगवान् का काम कर रहे हैं।" उस भाई के ये प्रेरणा भरे वाक्य मेरे लिए एक नया पाठ बन गये। ग्रामदान भगवान् का कार्य है। उसमें डर कहाँ ? उसमें तो निर्भयता ही निर्भयता है। कितना ऊँचा पाठ है यह और आदिवासी क्षेत्र के ये ग्रामीण लोग ग्रामदान की भावना को कितनी गहराई से सहज रूप में समझ जाते हैं, उसका यह उत्कृष्ट उदाहरण है।** यह उत्साह देख कर पदयात्री-दल के कुछ साथी तुरंत वहाँ ग्रामवासियों से सम्पर्क करने और दानपत्र इत्यादि की खाना-पूर्ति करने रुक गये। ता. २८ तक की खबर है कि करीब आधे लोगों ने दानपत्र भर दिये हैं। गाँव में ग्रामदान के कारण एक नये उत्साह की लहर दौड़ गयी है। महिलाओं में भी ग्रामदान के बारे में अनुकूल सम्मति ही प्रकट हुई है। गाँव में आनंद-उत्सव की तरह वातावरण बन गया। हनुमानजी के मंदिर पर गाँव वालों ने एकसाथ जाकर पाँच-छः नारियल फोड़े और प्रसाद वितरण किया। उनका कहना यह था कि ऐसे पावन प्रसंग जीवन में बार-बार नहीं आते हैं। यह तो भगवान् की प्रेरणा से ही प्रसंग आया है। ग्रामीण भाइयों की ग्रामदान के लिए ऐसी भक्ति-भावना हमारे लिए एक दिव्य संकेत है। "ग्रामदान भगवान् का काम है, यह पावन मंगल कार्य है और ऐसे अवसर जीवन में बार-बार नहीं आते हैं," ऐसे उद्गार ग्रामदान के बारे में ग्रामीण लोगों के द्वारा सुनने को मिले, यह सचमुच ही इस बात का विश्वास दिलाता है कि "यह भगवान् का ही कार्य है!"

त्याग औ' बिराग की सुभाग भरी मूर्ति–मंजु
गंज दुख दीनता पै गाजसी गिरावतौ।
समता-सुधा की वसुधा पै सरसाइ सेतु
व्यापक विसमता की तपनि बुझावतौ।
दान हूँ भूदान महा आनि ठिक ठान्यौ मन
द्वार द्वार दीननि के दौरि दौरि जावतौ।
गातौ गुनानुवाद दरिद–नारायणके
जोतिसी जगावतौ विनोबा इते आवतौ।

—थानसिंह शर्मा सुभाषी

www.vinoba.in

बच्चा यों बदलता है !

(महात्मा भगवानदीन)

मैं किसी काम से फ़ीरोजाबाद गया था। अपने एक मित्र के यहाँ बैठा उनसे बातें कर रहा था। इतने में एक सज्जन आये। मेरे सामने हाथ जोड़ कर खड़े हो गये। बोले—"कुसूर माफ हो, मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ।"

मैं बोला, "जरूर पूछिये।"

बोले, "मैंने आपका नाम सुन रखा है। पर यह भी सुन रखा है कि आप दंगई बालकों को ठीक कर देते हैं।"

मैं बोला, "फिर ?"

"असल में मैं इसलिए आया हूँ कि मेरा एक ७ बरस का बालक है। वह बेहद शरारती है। बालक तो सभी शरारती होते हैं, पर उसकी शरारत उस हद को लाँघ गयी है और बर्दाश्त से बाहर हो गयी है।"

"मैं नहीं समझता कि ७ बरस का बालक कोई ऐसी शरारत कर सकता है। क्या चोरी करने लगा है ?"

वे बोले, "चोरी वह कभी नहीं करता। झूठ भी नहीं बोलता। झूठ, चोरी तो मैं सह लेता। वह तो हरदम दूकान पर रहता है।"

मैं उनकी बात काट कर बोल पड़ा, "दूकान पर रहना तो बहुत अच्छी बात है।"

वे बड़े विनम्र होकर बोले, "दूकान पर रहना बेशक अच्छी बात है। पर वह तो ग्राहकों के सिर पर थप्पड़ जमाता है। मैं इत्रफ़रोश हूँ। दूकान पर भलेमानस ही आते हैं। वे इस तरह की बेइज्जती कैसे बरदाश्त कर सकते हैं ? और फिर ७ वर्ष के लड़के की ? मेरी दूकान चौपट होती जा रही है। इधर कुछ दिन तक यही हाल रहा तो दूकान बन्द करना होगा और पेट कैसे पालूँगा ? आप मेरे ऊपर दया कीजिये और उस बालक को ठीक कर दीजिये। उमर भर मैं आपका एहसान नहीं भूलूँगा।"

मैं बोला, "अच्छा साहब कोशिश करूँगा। दावा तो नहीं करता कि मैं उसे एक दिन में ठीक कर दूँगा। मैं कोई जादूगर तो हूँ नहीं। जब वह तुम्हारा कहना नहीं मानता, तो मेरे जैसे अपरिचित का भी क्या सुनेगा। फिर भी कोशिश करूँगा, क्योंकि इसे मैं अपना काम समझता हूँ।"

यह सुन कर भक्ति में आकर वह मेरे पाँव छूने को झुका। मैंने उन्हें रोकते हुए पूछा, "यह तो बताओ, मैं किस वक्त आपकी दूकान पर आऊँ ?

वे बोले, "जिस वक्त आपको सुविधा हो।"

"अच्छा मैं दो बजे आऊँगा। पर एक शर्त है कि बच्चे और मेरे बीच आप बिल्कुल दखल नहीं दे सकेंगे। वह मेरे साथ जो कुछ भी करे, आप उसे वह करने देंगे, रोकेंगे नहीं।"

वे भाई मान गये और चले गये।

मैं उन दिनों धोती-कुर्ता-अचकन पहनता था और सर पर साफा बांधता था।

मैं उस इत्रफ़रोश की दूकान पर जाकर बैठा ही था कि इत्रफरोश के लड़के ने बड़ी फुर्ती से उठ कर मेरे सर पर पूरे जोर की एक चपत जमायी, पर साफे की वजह से न मेरे लगी, न उसको मजा आया। मेरे चुपचाप रहने और सह लेने से उसकी शरारत को ठेस लगी। तुरंत ही उसने दूसरा रूप धारण किया। यानी चपत लगाने के झट बाद, मेरा साफा उतार कर सड़क पर फेंक दिया।

लड़के की शरारत का यह तीर भी खाली गया, क्योंकि न तो मैं बिगड़ा, न सड़क पर से साफा लाने के लिए उठा। उठना तो एक ओर, मैंने हिलने तक की उत्सुकता भी न दिखायी।

बालक की सारी शरारत झेंप गयी और जनरली का बाना पहन कर ऐंठ के घोड़े पर सवार हो गयी। क्योंकि बालक ने साफा फेंकते ही मुझे तुरंत हुक्म दिया--

"खड़े हो जाओ !"

मैं खड़ा हो गया।

वह बोला, "अचकन उतारो।"

मैंने अचकन उतार दी।

"सड़क पर फेंक दो।"

मैंने सड़क पर फेंक दी।

"कुर्ता उतारो।"

मैंने कुर्ता उतार लिया।

"उसको फेंक दो सड़क पर।"

हुक्म की तालीम करते-करते मैं मन-ही-मन सोचने लगा कि अगर धोती उतारने और सड़क पर फेंक देने का हुक्म होगा, तब मैं क्या करूँगा ? पर मेरी लाज रह गयी। बच्चे में समझदारी जाग गयी। कुर्ते के सड़क पर पहुँचते ही हुक्म आया, "साफा उठा कर लाओ।"

मैं साफा उठा कर ले आया।

"साफा बाँधो।"

मैंने साफा बाँध लिया।

"कुर्ता उठा कर लाओ।"

मैं उठा लाया।

"पहनो।"

जब मैं पहनने लगा, तो साफे की वजह से वह पहना नहीं जा सका। तब हुक्म मिला—

"कुर्ता हाथ में लो, साफा उतारो।"

मैंने वैसा ही किया।

"कुर्ता पहनो।"

मैंने पहन लिया।

"अचकन उठा कर लाओ।"

मैं उठा लाया।

"अचकन पहनो।"

मैंने पहन ली।

"साफा बाँधो।"

मैंने साफा बाँध लिया।

"बैठ जाओ।"

मैं बैठ गया।

बच्चे की शरारत, जिसने सरदारी का रूप लिया था, अपनी सरदारी खत्म कर चुकी। वह पीछे लौटने में शरमाती थी और आगे कोई राह न पा सकती थी। शरारत के लिए आगे जो राह थी, वह थी-आज्ञाकारिता के रूप में पुनर्जन्म लेना। बालक आखिरी हुक्म के बाद जैसे ही क्षण भर के लिए रुका कि मैंने समझ लिया कि अब शरारत आज्ञाकारिता में बदल चुकी है। मैंने बालक को अवसर दिये बिना प्यार भरी आवाज में हुक्म दिया,

"अब आप दूकान से नीचे उतर जाइये।"

वह तुरत नीचे उतर गया।

मैं बोला, "अब आप सीधे घर भाग जाइये।"

वह एकदम सीधे घर दौड़ गया।

यह देख उसका बाप एकदम बोल पड़ा—

"आपने जादू कर दिया।"

"मैं बोला, "मैंने कोई जादू नहीं किया। बहुत गरम सौदा किया है।"

लड़के का बाप बोला, "मतलब ?"

मैं बोला, "मैंने उसके दसियों हुक्म मानकर अपने दो हुक्म मनवाये।"

मैंने अन्त में लड़के के बाप से कहा, "मैंने खूब समझ लिया है कि क्या आप और क्या उसकी माँ, दोनों, लड़के की एक भी बात नहीं सुनते, यानी एक भी कहना नहीं मानते। इसलिए वह भी आप दोनों की नहीं सुनता।"

लड़के का बाप बोला, "आपका निदान बिल्कुल ठीक है। बेशक, हम दोनों उसकी एक भी बात नहीं मानते। बालक ने आपसे सीख ली हो या न ली हो, हम आपकी सीख गाँठ बाँधते हैं। अब हमें अपने पर विश्वास हो गया है कि हम बालक को ठीक कर सकेंगे।"

बाद में मुझे पता लगा कि वह लड़का इतना भला हो गया कि उसकी सारी शरारत ग्राहकों की खातिरदारी में बदल गयी।

———

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१२ जुलाअी सन् १९५७

डर पाप में फंसने का नहीं, पुण्य में फंसने का है!

(वीनोबा)

बहुतसे रचनात्मक कार्यकर्ता अपने रचनात्मक कार्यों की बात हमारे सामने रखते हैं और अुसका महत्व समझाते हैं। पर वे सोचते नहीं की यह शख्स तीस साल तक आखीर करता क्या था? कीतने ही गांवों में जाकर हमने काम कीया और सैकड़ों कार्यकर्ता तैयार कीये! बरसों तक यह कार्य चला। लेकीन जहां भी यह काम हुआ वहां वह 'पार्शीयल' (आंशीक) ही हुआ, पूरा नहीं हुआ। जीन पर प्रभाव पड़ा, वे खादी पहनने लगे, परंतु गांव का हर मनुष्य जैसे गांव का अनाज खाता है, वैसे हर कोअी खादी पहने, यह नहीं बना। यह तो तब होगा, जब या तो सरकार कानून बना कर दूसरे कपड़ों पर रोक लगाये या तो गांव के लोग स्वयं ग्राम-संकल्प करके स्वयमेव अुसको रोकें। हींदुओं ने गोमांस छोड़ दीया है। सस्ता होने पर भी वे अुसे नहीं खरीदेंगे। खादी के पीछे भी अैसी ही ताकत पैदा होनी चाहीअे! सरकार पैसा देने के लीअे राजी है, परंतु मील-कपड़ों पर पाबंदी लगाने के लीअे राजी नहीं है। सरकार की तरफ से खादी को यह 'प्रोटेक्शन' (संरक्षण) नहीं, 'सबसीडी' (मदद) मीलती है! वह भी सज्जनों का आग्रह है और गांधीजी का कार्य है, अीस वास्ते! वे कहते हैं, खद्दर अपने पांव पर खड़ी हो! हमने अुत्तर दीया था की खद्दर जानवर नहीं है, जो अपने पांव पर खड़ी होगी! अुसके पांव नहीं है। वह तो तुम्हारे पांव पर खड़ी होगी, तुम्हारे सीर पर, छाती पर बैठेगी, तुम्हारे शरीर पर वेष्टीत होगी। तुम अुसके पुत्र हो, वह तुम्हारी माता है। अुसका तुम पर अुपकार है। अुसका फैलाव करना बच्चे के नाते तुम्हारा कर्तव्य ही है! पर यह तो हुअी अुनकी बात! हमको क्या करना चाहीअे? हमको गांव-गांव में ग्राम-शक्ती नीर्माण करनी चाहीअे. 'कॉन्शसनेस' नीर्माण करनी चाहीअे, तब गांव यह तय करेगा की हमारे गांव में खादी ही चलेगी। यह संकल्प ग्रामदान के द्वारा ही बन सकता है। आज अेक भी पार्टी अैसी नहीं, जो खादी को न चाहती हो। लेकीन यह खद्दर का वास्तवीक प्रेम नहीं है। लोगों को मदद होती है, अीसलीअे वे यह काम करते हैं। पर जरूरत हो, तो डोल भी देने के लीअे तैयार हो जायेंगे! हम भी अुनसे मदद लेकर पाश में फंसे हुअे हैं! यह जब मैं देखता हूं, तब तो मैं तोबा-तोबा कर लेता हूं! अीसके लीअे शंकराचार्य का मैं बार-बार स्मरण करता हूं। अुन्होंने कहा है की पाप में मनुष्य अुतना नहीं फंसता, जीतना पुण्य में फंसता है, क्योंकी पाप के खीलाफ नीतीशास्त्र है और पुण्य के खीलाफ कुछ नहीं है! अतः वे पुण्य की शृंखला से बंध गये होते हैं!

——

(परली, ८-९)

सर्वोदय की दृष्टि :

रूस के नये परिवर्तन!

स्टालीन की मृत्यु के बाद रूस में सत्ता की जो होड़ शुरू हुई, उसकी अंतिम कड़ी शायद मालेनकोव, मोलोटोव प्रभृति के निष्कासन के साथ पूरी होने जा रही है! इसकी प्रथम कड़ी थी—बेरिया का खात्मा, जिसमें स्वयं मालेनकोव भी शामिल थे! पर बेरिया को जिस प्रकार का अंत देखना पड़ा, देश-विदेश की बदली हुई परिस्थितियों के कारण शायद इन लोगों को वह अंत न देखना पड़े! फिर भी क्रुश्चेव की भी ऐसी जीत सतत के लिए, बिना चुनौती के रह सकेगी या नहीं, पराजित दल हमेशा पराजित ही बना रहेगा या नहीं, इसका अंदेशा दुनिया से ज्यादा उन्हीं लोगों को होता है, जो उस होड़ को चलाते हैं और कूटनीति की शतरंज के दाँव-पेंच खेलने में माहिर हैं! इसलिए पराजित नेताओं के भविष्य के बारे में आज कोई बात निश्चित नहीं कही जा सकती। पार्लमेंटरी लोकतंत्र में पराजित दल को आगे-पीछे सत्ता-प्राप्ति की आशा तो होती है! पर यहाँ वह भी उम्मीद नहीं होने से सिवा षड्यंत्रों, सैनिक क्रांतियों आदि के, कोई मार्ग ही रह नहीं जाता। जाहिर है कि असंतोष, दबाव, द्वेषपूर्ण हार एवं निष्कासनों के दंश की प्रतिक्रियाएँ कभी रुक नहीं सकतीं, भले ही उन्हें देर-अबेर लगे और ये प्रतिक्रियाएँ भी कभी स्वस्थ नहीं हो सकतीं, यह भी स्पष्ट है, क्योंकि जिस तंत्र और पद्धति में से ऐसे परिणाम निकलते हैं, प्रतिक्रियाएँ भी उसी तंत्र एवं पद्धति के प्रभाव-परिणामों से मुक्त रह नहीं सकतीं! मालेनकोव प्रभृति पर जो इलजाम लगाये गये, वे सब तरह के हैं! उन्होंने सत्ता हथियाने का प्रयत्न किया, उन्होंने देश की अंतर्गत प्रगतियों में बाधा डाली, औद्योगिक, कृषि आदि की योजनाएँ ठप करने का प्रयत्न किया, रूसी गुट की जड़ें ढीली कीं, विदेश-नीति अपनी राह पर मोड़ी, जो शांति के विरुद्ध है, आदि आदि। 'क्रुश्चेव आदि ने भी हाथ में सत्ता न सिर्फ रख ली, बल्कि वह मजबूत भी बना डाली,' यह प्रत्याक्षेप शायद यहाँ कोई महत्त्व नहीं रखता! रही देश-विदेश की नीति चलाने की बात, सो वहाँ जनता की वाणी का, शक्ति का और उसकी राय का जब तक महत्त्व और उपयोग नहीं माना जाता, तब तक इतना ही कहा जा सकता है कि 'फलाँ गुट' की नीति अच्छी है या 'फलाँ गुट' की गलत। पर व्यक्ति की डिक्टेटरशिप गयी, तो भी दल की है ही! इस सारे प्रकरण में न तो जनता की कोई स्वयंभू राय दीख पड़ी, न मालेनकोव प्रभृति की भी खास सफायी सुनायी दी, न दल की किसी अंतर्गत विरुद्ध आवाज का ही पता चला। इन छः-सात लोगों के सिवा सारा दल 'एक मत' वाला ही बना रहा और जनता ने भी इस परिवर्तन को खूब पसंद किया, आदि बातें ही कही गयीं और वे भी इन परिवर्तनों के बाद! एक क्षण में सारी जनता ऐसी बदल जाती है, यह एक अद्भुत चमत्कार है सही!

परंतु जरा गौर करें, तो हम पायेंगे कि अन्य देशों की दलीय राजनीति की भी कोई बहुत संतोषजनक स्थिति नहीं है। वहाँ दल के अंतर्गत मतभेद कायम रहते हुए वे बर्दाश्त भी किये जाते हैं, जनमत का भी प्रभाव उन्हें मानना तो पड़ता है, विरोधी भी ऐसे ढंग से खत्म नहीं किये जाते हैं, अंतर्गत एवं बाहरी चुनाव भी होते हैं, आदि आदि उसकी अच्छी बाजूएँ हैं और निस्संदेह यह फर्क कम महत्त्व का नहीं है। लेकिन जहाँ तक जनता की वाणी या जनता की राय का सवाल है, वहाँ क्या स्थिति है? डिग्री के सिवा कोई बहुत बड़ा फर्क भी क्या अब बचा रह गया है? उस 'लोकतंत्री' शासन में भी तो जनता ऐसी ही असहाय्य बन गयी है या बनायी जा रही है! अन्यथा जिस ऐटम-बम के परीक्षणों के खिलाफ़ इतनी भावनाएँ उठ रही हैं, वे प्रभावशाली क्यों नहीं सिद्ध होतीं? हाँ, 'यह जनता' आवाज उठा सकती है और 'वह जनता' नहीं उठा सकती, इतना फ़र्क ज़रूर है! परंतु जब तक जनता की आवाज में कोई 'ताक़त' नहीं और जब तक उस ताक़त के द्वारा मौजूदा राजनीति का खात्मा होकर सच्ची 'नियंत्रक' स्वयं जनता ही नहीं बनती, तब तक केवल आवाज उठाना ही तो पर्याप्त नहीं होता है न! यह सही है कि रूस में दल की ताक़त अक्षुण्ण-अभेद्य रखने के लिए 'हर तरह' के प्रयत्न होते हैं और उस दल का संचालन भी एक ही 'ग्रूप' के हाथ में रहे, इसकी जी-तोड़ कोशिश होती है, पर अन्य देशों की भी 'दलीय' राजनीति मूल में अब बहुत ही भिन्न रह गयी है, ऐसी बात नहीं! इसीलिए 'सत्ताधारी पक्ष' 'सत्ताधीशों' की खुली आलोचना करने का हक़दार है या नहीं, ऐसे सवाल आज यहाँ भी उठ रहे हैं या अशोक मेहता दल की मान्य नीति के विरुद्ध 'कॉमनवेल्थ में देश के बने रहने' की भी राय दे सकते हैं या नहीं, ऐसे प्रश्न उठते हैं और दलीय अनुशासन भी ठीक वे ही प्रतिबंध लगाना चाहता है, जो दल को ही मजबूत बनाये! यह उस

www.vinoba.in

देश की बात हम कर रहे हैं, जहाँ दलीय लोकतंत्र अभी पूरा जम भी नहीं पाया है! अन्य देशों में से तो इंग्लैंड की बात हम देख ही चुके हैं कि उसने किस तरह मिस्र पर हमला किया, फ्रांस की समाजवादी पार्टी ने तक अल्जेरिया के बारे में कैसा रुख लिया और अमरीका के सायंटिस्ट दलीय-जाँच के अपमान के भय से कैसे आत्महत्या कर लेते हैं! स्पष्ट है कि जैसे दलों के भीतर ग्रूप और विरोध डिसिप्लीनादि के नाम पर बहुत बर्दाश्त नहीं किये जा सकते, फिर उनका खात्मा चाहे 'अहिंसक ढंग' से हो चाहे 'हिंसक ढंग' से! उसी तरह यह भी दिनोंदिन साफ़ होने लग गया है कि दलनिष्ठ राजनीति में दल-स्वार्थों के संमुख जन-स्वार्थ का या दलीय ताक़तों के मुक़ाबले जनशक्ति का, परिणामों के रूप में, गौण या क्षीण होना अवश्यंभावी है। यह ठीक है कि रूस की दलीय डिक्टेटरशिप के मुकाबले आज दलनिष्ठ पार्लमेंटरी लोकतंत्र ही एकमात्र उपाय दुनिया को सूझता है और उस लोकतंत्र से जनता काफी सहारा भी पा लेती है, तथापि दलीय राजनीति से भी असली जनशक्ति को जो धक्का लगता जा रहा है और इस लोकतंत्र में ऐसे जो खतरे आ रहे हैं, उन पर भी दुनिया को शीघ्र ही ध्यान देना होगा। उदाहरणार्थ 'बहुमत' का 'अल्पमत' पर बढ़ता हुआ शासन आगे भी बढ़ता रहेगा और फिर वही 'शासन' अनेक बुराइयों को जाने-अनजाने आमंत्रित करता रहेगा। इसीलिए जनशक्ति द्वारा सत्ता के संपूर्ण विकेंद्रीकरण के बिना दुनिया का निस्तार ही अब नहीं है, क्योंकि चाहे डिक्टेटिरशिप हो, चाहे कल्याण-राज्य हो, सत्ता का जो पंजा जनता पर सर्वंकश रूप में धीरे-धीरे व्याप्त होता जाता है, वह स्वयं अपने आप में एक अस्वाभाविक प्रक्रिया है और उसके दुष्परिणाम भी अवश्यंभावी हैं!

तथापि रूस के ये परिवर्तन स्वस्थ दिशा की ओर ही एक संकेत कर रहे हैं, स्थिति के 'नॉर्मलाइज़ेशन' (साधारणीकरण) की ओर ही यह प्रगति है, यह पंडितजी की राय सही है, क्योंकि उचित हो या गलत, आज दुनिया की या देशों की राजनीति का संचालन दुर्भाग्य से व्यक्ति या दल ही करते हैं और वे ही दुनिया को आज बचाने या खत्म करने की भी ताकत रखते हैं! पंडितजी के निवेदन में 'लीडरशिप का परिवर्तन' अभिप्रेत हो या न हो, यह एक प्रकट तथ्य है कि आज की राजनीति उसके प्रभाव से मुक्त नहीं है! इसीलिए तो विनोबा जी विनोद में कहतेहैं, "भगवान्! ख्रुश्चेव को, आईक को, ईडन को सदबुद्धि दे!" 'स्टालीनिस्ट रेज़िम' का यह विलयन स्वाभाविक नतीजा ही माना जा सकता है, जिसका परिणाम रूस की अंतर्गत व बाहर की नीति पर पड़े बिना रह नहीं सकता, बशर्ते कि यह विलयन टिक जाय और वह केवल व्यक्ति-परिवर्तन तक ही महदूद न रहे, 'तंत्र-परिवर्तन' भी होने लगे!

परंतु, रूस की घटनाएँ हमें दलनिष्ठ एवं सत्तानिष्ठ राजनीति के दोष-स्थलों की ओर भी देखने के लिए यदि प्रेरित न करें, तो उनसे सबक ही क्या मिला?

काशी, ८-७-५७ —लक्ष्मीनारायण भारतीय

स्व० अनुग्रह बाबू!

बिहार के मान्य सेवक श्री अनुग्रह बाबू का संबंध बिहार के रचनात्मक कामों से और भूदान-आंदोलन से कम नहीं रहा है। गांधीयुग से ही वे पू० राजेन्द्रबाबू के साथ रचनात्मक कामों में भाग लेते रहे हैं। देश का एक सेवक और रचनात्मक कामों का एक हितचिंतक ही चला गया है।

ईश्वर उन्हें शांति प्रदान करे।

काशी, ७-७-'५७ —लक्ष्मीनारायण भारतीय

श्री जयप्रकाशजी के शब्दों में :

भारत की समस्या और उसका हल

(कमलाकान्त वर्मा)

[खेद है, प्रस्तुत लेख ठीक दो माह के बाद हमारे हाथों आया! इसीलिए यह इतनी देरी से छप सका है, जब कि प्रेषक बंधु सर्वोदय-संमेलन के समय इसका प्रकाशन चाहते थे। परंतु इसके दोषी लेखक या प्रेषक नहीं हैं। हमारा अगर ऐसा खयाल हो कि सरकारी डाक-तार विभागों में ही सब धाँधली चलती है, सो बात नहीं! हमारे दफ्तरों में भी बेचारे वैसे ही तो आदम-ज़ात काम करते हैं, जैसे कि और दफ्तरों में! इस लेख का इतनी देरी से हाथ में आना महज उसीका एक नमूना है! —सं०]

"आज के भारत की समस्या आर्थिक या राजनीतिक उतनी नहीं है, जितनी कि आध्यात्मिक और नैतिक है," यह श्री जयप्रकाश नारायणजी की मीमांसा उनके एक भाषण में जब मैंने पढ़ी, तो मुझे लगा, मानों मेरे एक चिरानुभूत सत्य को शब्द मिल गये। अतः सोखोदेवरा-आश्रम आते ही पहला प्रश्न मैंने यही पूछा: "भारतीय समस्या का यह स्पष्ट निदान आपने सर्वप्रथम इसी समय किया है या इससे पहले और भी कभी किया था?"

इस प्रश्न के पीछे जिज्ञासा दूसरी थी, और वह यह कि यदि वर्तमान भारतीय समस्या प्रधानतः आध्यात्मिक और नैतिक मान ली जा चुकी है, तो क्या कारण है कि हमारी समस्त प्रचेष्टाओं में अर्थनीति को प्रमुखता देकर आध्यात्म को गौण ही रखा जा रहा है? कला की भाषा में पूछें, तो हमारी साधना के संगीत में मंद्र और तार के षड्जों में निरंतर अर्थ की ही झंकार क्यों आ रही है तथा आध्यात्मिकता और नैतिकता को पञ्चम और मध्यम की तरह केवल संवादी और अनुवादी स्वर ही बना कर क्यों रखा गया है?

जयप्रकाशजी की एक खिन्न मुसकान में ही मुझे बहुत कुछ उत्तर मिल गया: "मैं तो पहले भी कई बार यह कह चुका हूँ, किंतु आज का पत्रकार-जगत् इस दिशा में बहुत श्रद्धालु नहीं रह गया है। इसीसे मेरे भाषणों के ऐसे अंश शायद अधिक प्रकाश में नहीं आ सके हैं। भूदान-यज्ञ के पीछे जो प्रेरणा है, वह विशुद्धतया आध्यात्मिक है, किंतु अभी सामने जो कार्यक्रम है, वह स्पष्ट व्यावहारिक कारणों से अर्थ-निष्ठ बना कर रखा गया है।"

उनके इस विवेचन से मुझे बहुत दिन पहले गांधीजी द्वारा श्री टैगोर को लिखे हुए एक पत्र की कुछ पंक्तियाँ स्मरण हो आयीं। गांधीजी ने लिखा था कि "मेरी दृष्टि में आज आपकी समस्त कवितावली से अधिक मूल्यवान रोटी का एक टुकड़ा हो रहा है, जिसे देश के क्षुधित करोड़ों के हाथों में मैं रख सकूँ।" उस समय गांधीजी के इन शब्दों से केवल महाकवि ही क्षुब्ध नहीं हुए थे, बल्कि सारा साहित्यप्रेमी भारत चिंता में पड़ गया था कि क्या मानव की शारीरिक बुभुक्षा उसके समस्त सांस्कृतिक रस-कलश को एक बार ही सोख लेने जा रही है? किंतु अपने कार्य-क्रम के संबंध में गांधीजी के हृदय में कभी कोई संशय या दुश्चिंता उत्पन्न हुई, ऐसा नहीं जान पड़ता। आध्यात्मिक और नैतिक सिद्धांतों की परिधि में स्वयं रह कर और सारे देश को घेरे रखने का प्रयत्न करते हुए गांधीजी ने परिस्थितियों की विवशता के कारण अपने आंदोलनों को मुख्यतया राजनीतिक स्वाधीनता की उपलब्धि की ओर अभिप्रेरित किया। आदर्शवादी होने के साथ-साथ गांधीजी यथार्थवादी भी थे। उन्हें देने के लिए भारत के पास जो कुछ था, उसे लेकर उसकी कल्याण-साधना में उन्होंने अपना जीवन बिताया और उसके पास जो नहीं था, उसकी माँग करते हुए, साथ-साथ समस्त मानवता की मंगल-सिद्धि के लिए उन्होंने मृत्यु का वरण किया।

मैं सोच ही रहा था कि भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता की मुख्य निष्ठा से प्रेरित गांधीजी के सत्याग्रह-आंदोलनों और आर्थिक स्वतंत्रता को प्राधान्य देने वाले आज के इस भूदान-यज्ञ में जो साम्य दीखता है, वह कितने अंशों में वास्तविक और उचित है, तब तक जयप्रकाशजी कहने लगे, "यह सच है कि भू-दान-यज्ञ का वर्तमान कार्यक्रम मुख्यांश में अभी अर्थ-निष्ठ दीख पड़ता है, किंतु इसका कारण यही है कि जनता को उचित आर्थिक स्वतंत्रता की उपलब्धि कराये बिना उसके सम्मुख आध्यात्मिकता और नैतिकता की चर्चा एक प्रवंचना-सी जान पड़ती है। इस आर्थिक स्वतंत्रता की वास्तविक उपलब्धि जनता को तब तक नहीं हो सकती, जब तक अर्थोपार्जन के यंत्रों का स्वामित्व उसे न मिल जाय। अर्थात् वे सबकी मालिकी के न हो जायँ! भारत की जनता का विशालतर अंश देहातों में रहता है और उसके अर्थोपार्जन का सबसे प्रमुख यंत्र है—भूमि। इस भूमि का स्वामित्व, सारे सरकारी कानूनों के बावजूद, अभी तक एक अपेक्षाकृत बहुत ही छोटे समुदाय के हाथों में है। यह बहुत ही छोटा, किंतु अत्यंत प्रबल समुदाय अपना अनैतिक अस्तित्व कायम रखने के लिए किसी भी साधन को अप्रयोज्य नहीं मानता। जब तक हो सके, जैसे भी हो सके, उसे अपनी यह स्थिति बनाये रखने की ही कामना है—"शस्त्रेण शास्त्रेण वा।" परिणाम यह है कि यह समुदाय स्वामित्व-परिवर्तन का कोई सफल कानून प्रथम तो बनने ही नहीं देना चाहता और यदि जनता के अंततः अवश्यंभावी स्वामित्व को अधिक-से-अधिक समय तक टाल रखने के अभिप्राय से कुछ कानून बनाने अनिवार्य ही हो जायँ, तो उन्हें निरर्थक और निःसार बना डालने में किसी भी बल या कौशल के प्रयोग में वह कुंठित नहीं होता।

www.vinoba.in

"और यह स्थिति केवल भारत में नहीं, सारे विश्व में है," कह कर जयप्रकाशजी क्षण भर के लिए रुक गये। कितने भू-खंडों और समुद्रों को लाँघती हुई उनकी दृष्टि एक पल के लिए किन-किन देशों के सीमांतों से जा टकराई, मैं समझ नहीं सका।

और तब उनके मुंगेर के भाषण के कुछ अंश मुझे हठात् स्मरण हो आये। वहाँ उन्होंने कहा था कि "इंग्लैंड के गणतंत्रात्मक शासन के पिछले डेढ़ सौ वर्ष और सोवियत रूस के एकतंत्रात्मक शासन के ये चालीस वर्ष इस अखंडनीय सत्य के साक्षी हैं कि किसी भी देश या समाज में कानून का आधार ग्रहण कर वास्तविक और स्थायी साम्यवादी अर्थ-व्यवस्था कदापि स्थापित नहीं की जा सकती।

"इंग्लैंड वर्तमान गणतंत्री शासन-पद्धति की जन्मभूमि माना जाता है। फिर भी वहाँ अभी तक ऐसा कोई कानून नहीं बन सका है, जिससे राजनीतिक समत्वाधिकार का प्रबल गर्वी होकर भी वह देश अपने अपेक्षाकृत ग़रीब वर्गों के सामने आर्थिक समत्वाधिकारों की कोई युक्तिसंगत योजना रख सके। दूसरी ओर रूस अपने को संसार का सर्वप्रथम साम्यवादी देश घोषित करते थकता नहीं। किंतु वह आर्थिक साम्य के कठोर-से-कठोर कानून बना कर भी अपने छोटे-से अधिकाराधीन, शक्ति-केंद्रस्थ शासक-वर्ग में शक्ति-संचय के लोभ को, जो कि अर्थ-संचय के लोभ से कहीं अधिक भयानक है, स्वतः छोड़ने की अंतःप्रेरणा नहीं दे सका है।"

पिछले दिनों मिस्र और हंगेरी में जो घटनाएँ हो चुकी हैं, वे हठात् मेरी आँखों के सामने नाच उठीं। स्वयं राष्ट्र-संघ का या उन देशों का भी कोई कानून इतना बलवान सिद्ध नहीं हुआ, जो मिस्र पर हमला रुकवाता या एक रक्तसिक्त शासन-सत्ता के क्रूर नख-दंतों में फँसी चीखती-चिल्लाती हुई हंगेरी की असहाय जनता की रक्षा कर सकता! कानून की शक्तिमत्ता पर मानव की दयनीय निर्भरता की इससे तीव्रतर आलोचना इतिहास और कैसे कर सकता है?

"कानून की शक्ति की सीमाओं को देख और समझ चुकने पर," जयप्रकाशजी कहने लगे, "मानव-चेष्टा अब हृदय-परिवर्तन की ओर ही झुकनी चाहिए, ऐसा हमारा निर्णित मत है। अतः भारत की भावी अर्थ-व्यवस्था के लिए कानूनी शस्त्रसज्जा का सर्वथा परित्याग कर, हम हृदय-परिवर्तन और स्वामित्व-विसर्जन के भिक्षाटन में निकले हैं। अपने देश के अर्थोपार्जन के यंत्रों के स्वामियों से ही हम यह विनम्र निवेदन करने निकले हैं कि वे स्वेच्छा से ये सभी यंत्र, जो उनके पास वास्तव में समाज की ही धरोहर हैं, वापस समाज को दे डालें। तात्त्विक दृष्टि से देखने पर किसी को भी यह समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि वर्तमान यंत्र-स्वामियों के जीवन को समस्त सुख-सुविधाओं का, उनके प्रत्येक सूक्ष्म या स्थूल मूल्य का आदि स्रोत समाज ही है। तब इसका अंतिम सागर भी समाज ही क्यों न बने?

"समाज को कोई व्यक्ति या व्यक्ति-समुदाय उसके अधिकारों से अनिश्चित काल तक वंचित रख सकता है, यह एक असंभव कल्पना है। किंतु यह असंभव कल्पना भी अभी तक संभव केवल इसीलिए जान पड़ती थी कि मानव-संघर्ष के शस्त्रास्त्र पूर्णतया निर्णयात्मक नहीं बन सके थे! किंतु समाज के साथ प्रवंचना करने वालों ने ही परमाणु-अस्त्रों का आविष्कार करके समाज की वह कठिनाई दूर कर दी। आज इस परमाणु-युग में या तो समाज सर्वस्वाधिकारी बन कर रहेगा, नहीं तो पृथ्वी-मानव-विहीन हो जायेगी। आज एक या कुछ व्यक्तियों का ही स्वामित्व और मानवता का सर्वनाश, ये दोनों वाक्य पर्यायवाची हो गये हैं!

"जहाँ तक भारत का प्रश्न है, व्यक्ति से समाज को स्वामित्व-हस्तांतरण की इस लंबी प्रक्रिया में सबसे विशाल होने के कारण भूमि का सबसे पहला स्थान रखा गया है। इसके बाद सम्पत्ति, द्रव्य आदि सभी उत्पादन-यंत्रों की बारी आनी है। किंतु "शनैः पर्वत लंघनम्" के युग-सिद्ध आदेश को मान कर ही हमें चलना पड़ेगा।" मैंने पूछा: "अच्छा, तब भूमि की इस हस्तांतरण-प्रक्रिया का तार्किक उपसंहार क्या सामूहिक कृषि-कार्य में होगा?"

"नहीं", जयप्रकाशजी ने कहा, "सामाजिक चेतना के विकास की वर्तमान स्थिति में तो कम-से-कम नहीं। दाहिने हाथ से दान में दी हुई वस्तु को बायें हाथ से छीन लेने की चेष्टा नहीं करेगा, इतना विश्वसनीय अभी हमारा उच्च या मध्यम वर्ग नहीं हो सका है। सामूहिक कृषि-कार्य या और किसी भी प्रकार के सामूहिक उत्पादन की इकाई एक निश्चित परिमाण से बड़ी हो जाने पर एक वैसे ही नवीन व्यवस्थापक-वर्ग (managerial class) के भारत में भी उत्पन्न हो जाने का खतरा है, जैसा कि रूस में हुआ है और वह व्यवस्थापक-वर्ग तो वर्तमान स्वामी-वर्ग से भी कहीं अधिक भयानक सिद्ध होगा। हम तो अभी छोटी-छोटी पारिवारिक इकाइयाँ ही बनायेंगे।"

"तब ग्रामदान में इस पहलू का क्या स्थान है?" मैंने पूछा।

"ग्रामदान का वास्तविक अभिप्राय इतना ही है," जयप्रकाशजी बोले, "कि दान में घटिया जमीन या किसी भी ग्रामविशेष में जन-संख्या के अनुसार औसतन् कम जमीन किसीके हिस्से में देने की बाध्यता न रहे। जहाँ ग्राम-दान हुए हैं, वहाँ प्रकार और परिमाण, दोनों बातों को ध्यान में रख कर यथासंभव सम-विभाजन की चेष्टा की गयी है। ऐसी चेष्टा की सफलता ही ग्राम-दान की सार्थकता है। हाँ, ग्राम की सारी जमीन का एक विशेष अंश सामूहिक अधिकार में रखा गया है, जिसका समस्त ग्रामवासियों पर सामूहिक दायित्व भी है। इस सामूहिक जमीन की सारी आय ग्राम के सार्वजनिक कामों में खर्च की जायेगी, किंतु इसके अतिरिक्त जितने विभाजन हैं, वे पृथक्-पृथक् पारिवारिक उपभोग के लिए ही रहेंगे। किंतु एक बात और भी है। ये विभाजन सदा के लिए अंतिम रूप से नहीं कर दिये गये हैं। समय-समय पर परिवारों के सदस्यों की संख्या के घटने-बढ़ने पर आवश्यकतानुसार पुनर्विभाजन भी होते रहेंगे। किंतु इसकी मूल भित्ति यही है कि सारा ग्राम एक विशाल परिवार है और इस परिवार में अधिकार-वैषम्य न आने पावे, समस्त ग्राम इसके लिए सदा जागरूक रहे।"

"तो जब कि आप भू-स्वामित्व की भावना का मूलोच्छेद नहीं करके एक ओर एक व्यक्ति और दूसरी ओर एक विशाल समूह, इन दोनों के स्वामित्व-मात्र का खंडन करना चाहते हैं, तो इन दोनों के मध्य की रेखा की निश्चितता और स्थायित्व का आधार क्या होगा?" मैंने पूछा।

"यह आधार तो अंततोगत्वा केवल एक ही हो सकता है," जयप्रकाशजी ने मुस्करा कर कहा," मानवात्मा, मानव के प्रति मानव का नैसर्गिक प्रेम। और यही प्रश्न हमें भू-दान-यज्ञ के आध्यात्मिक तत्त्व की ओर लौटा लाता है!

"मनुष्य का आत्म-ज्ञान ही मानवसमाज का अंतिम प्रहरी है। भिन्न-भिन्न युगों में इस आत्मज्ञान का ही आधार ग्रहण कर मानव ने विकास की भिन्न-भिन्न मंजिलें तै की हैं। जब कभी मन, बुद्धि अथवा अन्य इन्द्रियों ने मानव के विकास-पथ में माया-नगरी बसा कर उसे दिग्-भ्रांत करने की चेष्टा की है और ऐसी चेष्टाओं की रंजक आख्यायिकाओं से इतिहास भरा पड़ा है, तब-तब मानव को आत्म-दर्शन कर अपनी आत्मा से ही अपने भ्रांति-मोचन की प्रार्थना करनी पड़ी है। और यह प्रार्थना कभी विफल गयी हो, ऐसा नहीं जान पड़ता। सम्पूर्ण सत्यता और निर्भरता की प्रतिज्ञा के साथ क्लांत-भ्रांत मानव ने अपनी आत्मा से पथ-निर्देश का वरदान कभी माँगा हो और तत्क्षण न पाया हो, ऐसी शिकायत विश्व-साहित्य के किसी भी कोने में अंकित नहीं दीख पड़ती।

"भिन्न-भिन्न युगों में माया के भिन्न-भिन्न नगरों की चक्राकार सड़कों और गलियों में चल-चल कर थके हुए मानव-समाज ने जब-जब अपने वास्तविक साधन-पथ को पहचाना है और आसक्तियों के चक्र-व्यूह को तोड़ कर अनासक्ति के चरम लक्ष्य की ओर वह अभिमुख हुआ है, तब-तब उसकी आँखों में नये तेज, पाँवों में नयी शक्ति और मन में नये विश्वास का संचार हुआ है। आत्मा ने युग-युग से मानव-समाज को केवल उसका पथ ही नहीं दिखाया है, उसे उस पथ पर चलने की शक्ति भी दी है।

"और मानव-इतिहास के ऐसे समष्टिगत नव-अभियानों का ही दूसरा नाम है—धर्म-चक्र-प्रवर्तन। एक ऐसा ही प्रवर्तन होने का समय आ गया है, आज ऐसा जान पड़ता है। मानव-इतिहास के एक नये मंगल प्रभात का असंदिग्ध आभास मिल रहा है। हो सकता है, सूर्योदय में विलंब हो, किंतु उषा की लालिमा क्षितिज में दीखने लगी है, इसमें संदेह नहीं।"

"आत्मा के प्रति इतना कृतज्ञता-ज्ञापन करके भी आपने 'परमात्मा' शब्द का एक बार भी प्रयोग नहीं किया, क्या यह इस कारण से कि हमारा वर्तमान संविधान हमें धर्म-निरपेक्ष बनाने के साथ-साथ ईश्वर-निरपेक्ष बनाने की भी कोशिश कर रहा है?" मैंने पूछा।

जयप्रकाशजी हँस पड़े। उन्होंने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। किंतु उत्तर की आवश्यकता थी भी नहीं। "ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति" कह कर भगवान् श्रीकृष्ण ने एक बार ही सदा के लिए इस प्रश्न का उत्तर दे दिया है!

हाँ, श्रीकृष्ण के इस कथन का मर्म आज के विज्ञान-दंभी, बुद्धिवादी भारत को, और उसके साथ ही, जिनके अंधानुकरण-मात्र से वह अपने को धन्य मान रहा है, उन पाश्चात्य देशों को कैसे, किन शब्दों में समझाया जा सके, यह एक प्रश्न है, जिसका उत्तर इतना आसान नहीं है।

---

www.vinoba.in

ग्रामदान और ग्रामराज के मोर्चे पर

(मोतीलाल केजरीवाल)

केरल का सर्वोदय-सम्मेलन समाप्त होने पर भूमि-क्रान्ति, ग्रामराज्य एवं इनकी सिद्धि के उपाय के सम्बन्ध में विचार करते हुए मैं लौटा। रेल में जो मेरे साथ यात्रा कर रहे थे, उन साथी कार्यकर्ताओं से भी भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करता रहा। बाबा ने कालड़ी के अपने भाषण में कहा था कि हम कार्यकर्ता श्रद्धामय होकर अपने कार्य-क्षेत्र में काम करेंगे, तो चमत्कार होगा, सो उनकी ये बातें भी मेरी स्मृति में सदा रहती थीं। रेल में ही मैंने तीन मोर्चों वाला कार्यक्रम सोच कर स्थिर किया।

पहला तो यह था कि किसी सर्वदानी ग्राम में ग्रामराज्य स्थापित करने की तैयारी की जाय। यह तैयारी करने के पहले कथा के रूप में ग्राम के सभी बालिग नर-नारियों को प्रतिदिन लगातार चार-पाँच दिन तक विनोबाजी की 'एक बनो नेक बनो', 'गाँव-गाँव में स्वराज्य' और धीरेन्द्र भाई की 'ग्रामराज्य' ये पुस्तिकाएँ सुना कर तथा समझा कर ग्राम-राज्य संविधान-सभा बनायी जाय। संविधान-सभा की बैठक का स्थान और समय ऐसा तय किया जाय, जहाँ आस-पास के गाँवों से सैकड़ों आदमी आकर संविधान सभा की कार्यवाही, दर्शक के रूप में देख सकें।

दूसरा मोर्चा यह सोचा कि एक बड़े से नगाड़े को बैलगाड़ी पर रख कर एक भाई उसे बजावे और वह ऐसा बजे, मानो युद्ध-बाजा बज गया हो और जिसकी आवाज दो फर्लांङ्ग से ही सुनायी पड़े। दस-पन्द्रह आदमियों का जत्था उस बैलगाड़ी के साथ घोष लगाते हुए चलता हो और पचासों गाँवों में ठहर-ठहर कर हम सन् '५७ का सन्देश सुनाते जायँ और गाँव की प्रत्येक झोपड़ी के सामने शंख बजा कर दो-चार मिनिट का एक भाषण घर वालों को सुना दिया जाय। यह कार्यक्रम उसी क्षेत्र में पूरा किया जाय, जहाँ आदिवासी और पिछड़े वर्ग के लोगों का बाहुल्य हो।

तीसरा मोर्चा यह सोचा कि संथाल परगने के सीमान्त क्षेत्र में तथा अन्य क्षेत्र में भी पड़ोसी जिला भागलपुर के कार्यकर्ताओं के साथ हम घूमें, सार्वजनिक सभा भी करें और प्रभावशाली जमीनवालों से मिल कर उन्हें ग्राम-राज्य सम्बन्धी केरल-सम्मेलन का संदेश सुना दें। रेलयात्रा में ही भागलपुर जिले के प्रमुख कार्यकर्ता पं० बौद्ध नारायण मिश्रजी के साथ संयुक्त यात्रा का कार्यक्रम बन गया।

पहले और दूसरे मोर्चे के सम्बन्ध में कार्य आरम्भ नहीं हुआ, क्योंकि सब जगह किसान खेती-सम्बन्धी प्रारंभिक तैयारी में लग गये। तीसरा कार्यक्रम मिरजा चौकी से शुरू हुआ। केरल का अहिंसक क्रान्ति का सन्देश हमारे पहुँचने के पहले ही बहुत-से लोगों के पास पहुँच चुका था। जिस-जिस गाँव में हम पहुँचते थे अथवा जिन गाँवों से होकर हम गुजरते थे, वहाँ-वहाँ हम भूमि क्रान्ति सम्बंधी घोष या नारे लगाते और भूमिवानों के घर पर जाकर उनसे मिल कर गाँव की जमीन गाँव में बराबर-बराबर बाँट लेने का क्रान्तिकारी सन्देश सुना देते। राह में चलते हुए इक्के-दुक्के व्यक्ति एवं खेत में काम करने वाले मजदूर को भी हम लोग विनोबा का संदेश दे देते। आठ दिन की यह ७६ मील की पदयात्रा बहुत आनन्द और उत्साह से बात की बात में बीती। कार्यकर्ताओं को न तो कड़ाके की धूप की परवाह थी और न बीच-बीच में पड़ जाने वाली वर्षा की ही। यात्रा में समय की पावन्दी नहीं थी। कभी प्रातः ३½ बजे, कभी ६ बजे वह शुरू होती और दोपहर की प्रखर धूप में भी वह चालू रहती। हमारे जत्थे में ८ से लेकर १५ तक कार्यकर्ता रहते थे।

इस यात्रा में ऐसे लोगों से भी हम मिले, जिनके पास सैकड़ों और हजार बीघा तक जमीन थी तथा जिनके खेत में ट्रैक्टर (Tractor) भी चलते थे। भूमिहीनों और अल्प जमीन वालों के सम्पर्क में तो हम आते ही थे। एक ट्रैक्टर वाले सज्जन के घर, जिनके पास एक हजार बीघा के लगभग जमीन थी, सूर्यास्त के बाद हम लोग पहुँचे। इनको भूदान की उपयोगिता और महत्ता में तनिक भी आस्था नहीं थी। ये कड़े एवं अनर्गल आरोप लगा कर संत विनोबा के भोजन सम्बन्धी खर्च की भी आलोचना करते थे। इन्होंने हमारी टोली के लोगों को, जिसमें कुल ८ आदमी थे, पानी पीने के लिए भी नहीं पूछा, क्योंकि उनके जवाब-सवालों ने हमको बता दिया कि ये किसी दूसरी ही सृष्टि के जीव हैं। पर हमें आश्चर्य यह हुआ कि न तो इन्होंने और न धनी कहलाने वाले अन्य किसी भाई ने ही विचार सुन कर 'ना' नहीं कहा। यह स्पष्ट मालूम देता था कि विनोबा की वाणी हमारे साढ़े तीन हाथ के शरीरस्थ मुँह से निकलने वाली वाणी नहीं थी, किन्तु वह जमाने की पुकार थी। बहुत प्रेम से इन सब भाइयों को हमने विनोबा के विचार सुनाये। पं० बौद्ध नारायण मिश्र की, जो विश्व-विद्यालय से उत्तीर्ण, लम्बे अनुभव के एक पुराने वयोवृद्ध कार्यकर्ता हैं, समझाने की शैली भी अपने ढंग की बहुत चोखी थी, फिर भी जमीन का मोह इतना जबरदस्त था कि हम लोगों की तर्कप्रणाली और युक्तियाँ उसके सामने छोटी पड़ जाती थीं। कठोपनिषद् के 'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः', वित्त के द्वारा मनुष्य की तृप्ति नहीं होती, 'न साम् पराय प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढ़ं', धन-सम्पत्ति के कारण जो प्रमादी और मूढ़ बन गया है, उसको परलोक अर्थात् मरने के बाद की गति का भी ज्ञान नहीं रहता, इत्यादि वाक्य मुझे याद आ गये। मैं समझा कि सभी देवता आशुतोष नहीं होते। उनको प्रसन्न करने के लिए तो कड़ी तपस्या करनी पड़ती है।

यद्यपि किसी भाई ने भी ना नहीं कहा एवं एक को छोड़ कर सभी ने आदर भी किया, किन्तु उन लोगों के मन में जो बातें चल रही थीं, उनकी प्रतीति भी मुझे हो रही थी। वे सोच रहे हैं कि विनोबा का आन्दोलन यदि टाँय-टाँय-फिस हो गया, तो हमारी जमीन व्यर्थ ही हाथ से निकल जायगी, क्योंकि उन्हें पूरा विश्वास है कि वर्तमान् सरकार के राज्य-काल में उनकी जमीन पर कोई भी आँच आने वाली नहीं है। यदि कहीं सीलिंग (हदबन्दी) भी बनी, तो किसी-न-किसी तरह, हाथ-फेरी करके अपनी जमीन बचा ही लेंगे। अपनी-अपनी भाषा में उन जमीन वालों ने शिष्टतापूर्वक जो उत्तर हमें दिया, उसको एक वाक्य में हम गूँथ रहे हैं: **'समय आने पर हम क्या किसीसे पीछे रहेंगे ? हम इस कार्य को अच्छा समझते हैं। परिस्थिति आने दीजिये। हम भी जमीन बाँट देंगे।'**

'समय आने पर' का विश्लेषण

उपरोक्त शब्दों का अर्थ हमें लगाना चाहिये। अपनी देह के किसी भाग में हो जाने वाले फोड़े का मवाद निकाल देने पर दर्द मिट जायगा, ऐसा जानते हुए भी अपने फोड़े को अपने हाथ से फोड़ देने वाले मनुष्य बिरले ही होते हैं। भूदान, ग्रामदान और इनसे निष्पन्न होने वाला सर्वोदय-समाज अच्छा एवं हितकारी है, ऐसा जानते हुए भी मोहवश लोग जमीन नहीं देते और समय की प्रतीक्षा कर रहे हैं। समय और परिस्थिति का अर्थ यदि वे यह समझते हैं कि जनता जबरदस्ती करके अथवा सरकार कानून बना कर उनकी जमीन लेगी और तब वे जमीन दे देंगे, तो ऐसा अर्थ लगाने का मतलब यह हुआ कि 'दण्ड' से ही काम निकलने वाला है, शान्ति से नहीं। पर हम तो समझते हैं कि शान्तिमय उपाय ही कल्याण-कारक है तथा शांति में काफी शक्ति भी है। इसलिए मैं तो यह समझता हूँ कि समय और परिस्थिति को ग्रामदान के अनुकूल बनाने के लिए निम्नलिखित कार्य-क्रम को अपनाना चाहिये:

(१) बैलगाड़ी पर नगाड़ा रख कर संयमित तथा प्रभावशाली भाषा बोलने वाले कार्यकर्ता को एक-एक जत्था साथ लेकर हाट में, बाजार में और गाँव-गाँव में तीन महीने की अखण्ड यात्रा करनी चाहिये। एक-एक जिले में ऐसे-ऐसे पाँच-सात-दस जत्थे बनाये जायँ।

(२) दिल्ली और पटना रेडियो (Radio) से प्रान्त की भिन्न-भिन्न भाषाओं में जैसे-भोजपुरी, मागधी, मैथिली, बनारसी, अवधि, संथाली आदि में भूदान और ग्रामदान का महत्त्व बताया जाय और ऐसे रेडियो प्रसिद्ध हाटों में, पंचायत-घरों में, सिनेमाओं में एवं अन्य सार्वजनिक स्थानों में रखे जायँ। उनके बोलने के समय की सूचना भूदान-कार्यकर्ता जनता को दे दें और समय पर जनता को रेडियो के पास लाकर उपस्थित कर दें। आदिवासी क्षेत्रों में इसका जोरदार प्रबन्ध होना चाहिये।

(३) **कार्यकर्ताओं को एक जगह इकट्ठे करने वाले तथा खर्चीले सम्मेलन फिलहाल बन्द कर दिये जायँ और प्रभावशाली नेता एवं कार्यकर्ता जमीन माँगने के लिए व्यक्तिगत रूप से निकल पड़ें।** जिस दिन श्री जयप्रकाशजी, दादाजी, धीरेन्द्रभाई सरीखे लोग जमीन एवं सम्पत्ति वाले लोगों के घरों पर पहुँचने लगेंगे, तब समय और परिस्थिति जल्दी बदलेगी।

(४) प्रान्तीय या अखिल भारतीय स्तर की राजनैतिक संस्थाओं—जैसे काँग्रेस, प्रजा-समाजवादी, साम्यवादी, झारखण्डी के नेता आपस में मिलें और भूदान तथा ग्रामदान आदि की महत्ता बतलाते हुए संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित करके देश की जनता के सामने रखें एवं खुद उस काम में लगें।

(५) ग्रामराज्य का संविधान ग्रामवालों के द्वारा ही बनवाने का प्रयोग हरेक जिले में, यदि ग्रामदान मिल गया हो, तो करना चाहिये।

उक्त पाँच बातें कार्यकर्ताओं सामने मैं पेश करता हूँ।

---

www.vinoba.in

साहित्य-परिचय

भारतीय ग्रंथमाला, ९० हिवेट रोड, प्रयाग

लोकराज्य या सच्चा लोकतंत्र, ले० भगवानदास केला, पृष्ठ १५६, मूल्य १।)

लोकतंत्र और लोकराज्य का विवेचन करते हुए लेखक ने प्रस्तुत लोकतंत्र की खामियों की ओर जहाँ संकेत किया है, वहाँ लोकराज्य अर्थात् ग्रामराज्य की सर्वांगीण महत्ता भी प्रस्तुत की है। केलाजी राजनीति-शास्त्र के माने हुए लेखक हैं। प्रस्तुत पुस्तक में उनके अध्ययन, विवेचन और चिंतन का अच्छा परिचय मिलता है।

मालकियत का विसर्जन, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ११२, मूल्य १)

प्रस्तुत पुस्तक में श्रद्धेय केलाजी ने अपनी मार्मिक शैली के द्वारा भूमि और संपत्ति के स्वामित्व के संबंध में विचार करते हुए उसकी व्यर्थता सप्रमाण प्रकट की है। साथ ही व्यक्तिगत स्वामित्व कितना हानिकर है, उसका इतिहास व स्वरूप क्या है, वह कैसा विसर्जित हो सकता है, इसका विवेचन भी इस पुस्तक में है।

सर्वोदय-जीवन-मन्त्र, ले० जवाहिरलाल जैन, पृष्ठ ४८, मूल्य ।=)

"सर्वोदय की दिशा" का यह नया संस्करण है, जिसमें द्वादश व्रतों का विवेचन इस ढंग से किया गया है कि जीवन में वह उतारा जा सके।

आदर्श साहित्य-संघ, सरदारशहर (राजस्थान)

विजय-यात्रा, ले० मुनिश्री नथमलजी, पृष्ठ १८२, मूल्य १।।।)

जीवन के अंतरतम को सूक्ष्म स्पर्श करके काव्यमय भाषा में आत्मजागृति उत्पन्न करने वाला यह एक ऐसा आलोक-ग्रंथ है, जिसमें भगवान् महावीर की वाणी लेखक की प्रतिभा के आवरण में गद्यगीत का रूप लेकर प्रकट हुई है। बोधि-लाभ, चरित्र-लाभ, दृष्टि-लाभ, समाधि-लाभ और सिद्धि-लाभ; ऐसे पाँच विश्रामों में यह परिवेष्टित है। जीवन और जगत् के अंतर-बाह्य रूपों और अंगों पर यह आत्म-चिंतन बड़ा मनोरम और हृदयग्राही है। काव्य और दर्शन का सुन्दरतम सामंजस्य ही इसमें प्रस्तुत हुआ है।

आचार्य श्री तुलसी, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ १९१, मूल्य सजिल्द २) अजिल्द १।।)

प्रस्तुत लेखक आचार्यश्री के निकटवर्ती मुनिश्री हैं। इसमें उन्होंने आचार्यश्री के व्यक्तित्व को और उनकी विशेषताओं को प्रकाश में लाने का सफल प्रयत्न किया है। उनके जीवन के विविध अनुभव रोचक हैं। आज आचार्यश्री अणु-व्रत-आंदोलन की पताका जगह-जगह फहरा रहे हैं। ऐसे आंदोलन के प्रणेता का यह परिचय पठनीय है। श्री जैनेन्द्रजी की भूमिका भी है।

दयादान, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ३६, मूल्य ।=)

आचार्यश्री तुलसीजी की निरूपण-पद्धति के आधार पर तेरापंथी आद्य आचार्य श्री भिक्षु का दयादान-संबंधी दृष्टिकोण जैन-शास्त्र के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

विजय के आलोक में, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ३६, मूल्य ।=)

मुनिश्री ने इसमें भगवान् महावीर के वाङ्मय-सागर में से चुन-चुन कर उन बहुमूल्य रत्नों का संकलन अपनी भाषा में किया है, जिनका आलोक जीवन-साधकों के लिए प्रकाश-स्तंभ का काम दे सकता है।

अहिंसा की सही समझ, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ४२, मूल्य ।)

तेरापंथ से संबंधित आलोचनाओं का जवाब इसमें दिया बताया है।

नयवाद, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ३२, मूल्य ≡)

नयवाद का परिचय संक्षेप में, दार्शनिक-व्यावहारिक रूप से।

जैन और बौद्ध, ले० उपर्युक्त, पृष्ठ १६, मूल्य ≡)

दोनों धर्मों के कुछ तत्त्वविचारों के तुलनात्मक अध्ययन की झाँकी।

आचार्य भिक्षु और महात्मा गांधी, ले० मुनिश्री नगराजजी, पृष्ठ १२४, मूल्य १।)

इसमें दोनों के अहिंसा-संबंधी विचारों की तुलना करने का प्रयत्न है।

युगधर्म तेरापंथ, (द्वितीय संस्करण) ले० उपर्युक्त, पृष्ठ ४६, मूल्य ।=)

तेरापंथ के आदर्श और बुनियादी संगठन का संक्षिप्त परिचय।

अन्य प्रकाशन

चोर-डाकुओं के सच्चे आचार्य, मूल गुजराती ले० बबलभाई मेहता, हिंदी अनु० निगमानन्द परमहंस, प्र० बालगोविंद कुबेरदास की कंपनी, गांधी मार्ग, अहमदाबाद, पृष्ठ ४३२, मूल्य ४)

श्री रविशंकर महाराज का जीवन एक ऋषि-का जीवन है, तपःपूत क्रांतिकारी का जीवन है। उन्होंने बड़े-से-बड़े अपराधी के हृदय में प्रवेश करके उसका कैसे आमूलाग्र परिवर्तन किया—एक बार और एक जगह नहीं, अनेक बार और अनेक जगह, इसका इतिहास समाजशास्त्रियों और समाज-सेवकों के लिए बड़ा प्रेरक होगा। उनके जीवन का क्षण-क्षण ऐसे क्रांति-कार्यों में बीता है। आज वे अपनी वही अमूल्य पूँजी लेकर भूदान-यज्ञ में जुट गये हैं। ऐसे महान् सेवक और क्रांतिकारी की यह जीवन-झाँकी, जो उनके जीवन के अनेक उद्बोधक प्रसंगों और घटनाओं, से तथा राष्ट्रीय संग्राम की पावन गाथाओं से भरी है, हरेक को पढ़नी चाहिए।

भूदान-गंगोत्री, ले० दामोदरदास मूँदड़ा, प्र० अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी। पृष्ठ ३९२, मूल्य २।।)

जिस ईश्वरप्रेरित भूदान की प्रथम घटना ने देश में नवजीवन का संचार किया, भूदान की वह गंगोत्री आज अजर-अमर हो गयी है। भूदान-आंदोलन कैसे शुरू हुआ, बढ़ा और आगे चला, विनोबाजी के आज के विचार बीज-रूप में भी उस समय कैसे वर्तमान थे, यह सब वर्णन रोचक भाषा-शैली में इस पुस्तक में है। हर जगह विनोबा-वाणी देकर सुन्दर सामंजस्य कर लिया गया है। भूदान-आंदोलन के गहरे अध्ययन के लिए यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण बुनियादी सामग्री प्रस्तुत करती है।

वेदव्याख्या ग्रंथ—प्रथम पुष्प, ले० आचार्य विद्यानन्द विदेह, प्र० श्री विश्वदेव शर्मा, व्यवस्थापक—वेद-संस्थान, अजमेर। कुल पृष्ठ १३०, मूल्य २)

आचार्य विदेह ने वेदों का जो भाष्य किया है, उसका यह प्रथम पुष्प है। वेद के आधार से मानव-जीवन की अनेक गुत्थियाँ कैसे सुलझायी जा सकती हैं, इसका विवेचन इसमें किया गया है और अंतःसाधना और आधुनिकीकरण, इन दोनों ही प्रणालियों का उपयोग किया गया है।

अकिलीची कहाणी (मराठी), ले० यदुनाथ थत्ते, प्र० चित्रशाला प्रेस, १०२६ सदाशिव पेठ, पुणें २। पृष्ठ ४८, मूल्य ।=)

उड़ीसा की क्रांति का दर्शन लेखक को जैसा हुआ है, उसका एक सजीव चित्र कहानी के द्वारा उन्होंने मधुर और सरल भाषा में, आकर्षक शैली में कथा और संवादों के रूप में प्रस्तुत किया है। अकिली गाँव की यह कहानी ग्रामदान-क्रांति का एक पुनीत दर्शन ही कराती है। पुस्तक सचित्र और प्रौढ़ों-ग्रामीणों आदि के लिए उपादेय है।

पत्र-पत्रिकाएँ

गांधी मार्ग (हिंदी, अंग्रेजी) सं० एस० के० जॉर्ज, प्र० गांधी-स्मारक-निधि, प्रकाशन-विभाग, मणिभुवन, १९ लैबरनम रोड, मुंबई ७। वार्षिक मूल्य हिंदी २), एक प्रति ।।।); अंग्रेजी ५), एक प्रति १।।)

गांधी-स्मारक-निधि की ओर से हिंदी और अंग्रेजी में अलग-अलग यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले जनवरी से प्रकाशित हो रही है, जिसमें गांधीजी के जीवन, कार्य और तत्त्वज्ञान पर देश-विदेश के चिंतकों, विचारकों के महत्त्वपूर्ण लेख रहते हैं, स्तर भी ऊँचा और विविधरूपेण है। गांधीजी के जीवन-चर्या के विभिन्न अंगों का यह अध्ययन बहुत उपयोगी है। पत्रिका ने बहुत बड़े अभाव की पूर्ति की है, यह कहने की आवश्यकता नहीं।

"आर्थिक समीक्षा" : सर्वोदय अंक (पाक्षिक) प्रधान सं. श्रीमन्नारायण, सं० हर्षदेव मालवीय, प्र० अ० भा० काँग्रेस-कमेटी, दिल्ली। पृष्ठ १३४, वार्षिक मूल्य ५), इस विशेषांक का ।।।)

"आर्थिक समीक्षा" अपने विशेषांकों के लिए वैसे ही प्रसिद्ध होती जा रही है, जैसे "कल्याण।" प्रस्तुत विशेषांक में भूदान, ग्रामदान, संपत्तिदान आदि सर्वोदय के विविध अंगों, अनुभवों और विशेषताओं पर विविध रूप से प्रकाश डाला गया है। विनोबा के भाषणों में से कथा-भाग चुन कर देने का उपक्रम बड़ा अच्छा है। गेटअप आदि उत्कृष्ट है। अंक बहुत सुन्दर और संग्राह्य है।

साधना: कुमार विशेषांक (मराठी) सं० मंडल-यदुनाथ थत्ते, आदि। प्र० साधना प्रकाशन, ३७४ शनिवार पेठ, पुणें २। वा. मूल्य १२), विशेषांक का १)

प्रसिद्ध मराठी साप्ताहिक 'साधना' ने अब से एक नया उपक्रम शुरू किया है, जो "कुमार-विशेषांक" के रूप में हमारे सामने आया है, जैसा कि अंग्रेजी में 'शंकर्स वीकली' का कुमार-विशेषांक निकलता है। साने गुरुजी बच्चों के अत्यंत प्रिय साथी और मार्गदर्शक थे। उनकी ही स्मृति में यह उपक्रम है। इस अंक में बच्चों के लिए बड़ी सुंदर और मनोरंजक कथा-कविताएँ एवं चित्रादि तो हैं ही, स्वयं बच्चों की भी विविध प्रकार की रचनाएँ हैं और दोनों ही मन को बड़ी लुभाती हैं। कुमार वय के बालकों का कलात्मक विकास अन्य विकास-क्रम के साथ-साथ कैसा हो सकता है, उसका यह एक सुंदर नमूना है। इस उपक्रम के लिए संपादक-वर्ग बधाई का पात्र है। इस प्रथम प्रयत्न में ही संतोष न मान कर संपादकों ने आकांक्षा रखी है कि ऐसा वार्षिक कुमार-अंक आगे और भी उत्तम निकले।

—ल० भा०

www.vinoba.in

आबू में श्री विमला बहन

राजस्थान में भूदान-कार्य में लगे हुए जिला-निवेदकों की बैठक आबू में राजस्थान समग्र सेवा-संघ द्वारा आमंत्रित हुई। उसमें बोलते हुए श्री विमला बहन ने कहा :

"कालडी में विनोबा ने हमारे सामने तीन बातें रखी : पहली यह कि गांधीजी राजनीतिज्ञ नहीं, लोकनीतिज्ञ थे और उनका प्रयास सदैव राजनीति को लोकनीति में बदल देने का रहा। दूसरी बात विनोबा ने यह कही कि पुराणमतवादी भूतकालीन सतयुग की बात करते हैं और साम्यवादी भविष्य के सतयुग की रम्य कल्पना करते हैं। लेकिन सर्वोदय वाले वर्तमान काल में सतयुग की स्थापना करना चाहते हैं। विनोबा ने तीसरी बात 'डिफेन्स मेझर' के रूप में ग्रामदान प्राप्त करने की रखी। ग्रामदान की आवश्यकता विनोबा के लिए या आपके-हमारे लिए नहीं, बल्कि परिस्थिति-परिवर्तन के लिए, गाँव बचाने के लिए है। अहिंसात्मक आंदोलन की सफलता कार्यकर्ताओं की निष्ठा से मानी जाती है। इस आन्दोलन का जो प्राण है, वह है हमारा अपना गुणविकास। हम कार्यकर्ता अपनी भीतरी निष्ठा की जाँच करते रहें, यही हमारा संबल है।"

राजस्थान-भूदान-बोर्ड के अध्यक्ष श्री गोकुलभाई ने बताया कि अब हमें ग्रामदान-आन्दोलन पर अपने आपको केंद्रित करना है और इस दृष्टि से कुछ क्षेत्र चुन कर उसमें विशेष शक्ति लगानी है। संघ के मंत्री श्री छीतरमल गोयल ने बताया कि ग्रामदान के लिए किसी प्रकार का प्रलोभन हमें नहीं देना चाहिए और साथ-साथ सहकारिता के लिए भी प्रयत्न किया जाना चाहिए।

नागोर जिले के भूदान-निवेदक श्री बद्रीप्रसाद स्वामी ने बताया कि **नागोर तहसील में ग्रामदान की हवा फैल चुकी है और थोड़े प्रयत्न में ही इस संपूर्ण तहसील का दान प्राप्त हो सकता है!** विचार-शिविर के संयोजक श्री त्रिलोकचंद जैन ने बतलाया कि कालड़ी में एक भाषण में हमारे एक नेता ने कहा था कि ग्रामदान हम लें, लेकिन उस ग्राम के निर्माण की जिम्मेवारी हमारे ऊपर नहीं है। मैं समझता हूँ कि यह बात ग्रामदान के काम को आगे नहीं बढ़ायेगी। दूसरे, हमें अब लोगों की समस्याओं के साथ भी एकरूप हो जाना चाहिए।

द्वितीय बिहार-प्रादेशिक सर्वोदय-संमेलन

(सच्चिदानंद)

२८ जून से ३० जून तक पूसा रोड (दरभंगा) में बिहार-सर्वोदय-मंडल के तत्त्वावधान में बिहार का द्वितीय प्रादेशिक सर्वोदय-संमेलन एक नये उत्साह के साथ संपन्न हुआ। इस संमेलन में लगभग १३०० कार्यकर्ताओं ने हिस्सा लिया, जिनमें लगभग २० रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधि तथा प्रत्यक्ष भूदान-कार्य में लगे हुए जीवनदानी, सत्याग्रही लोकसेवक, क्षेत्रीय निवेदक एवं अन्य कार्यकर्ता सम्मिलित थे। प्रमुख लोगों में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, सिद्धराज ढड्ढा, लक्ष्मी बाबू वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, प्रभावती देवी, ब्रजकिशोर प्रसाद साहू, ध्वजा प्रसाद साहू, नगेन्द्रनारायण सिंह, प्रो० राममूर्ति, आचार्य बदरीनाथ वर्मा (भूतपूर्व शिक्षा-मंत्री), रामशरणजी उपाध्याय (भूतपूर्व बुनियादी शिक्षोपनिर्देशक बिहार), रमावल्लभ चतुर्वेदी, पारसनाथ शर्मा तथा श्यामसुन्दर प्रसाद (संयोजक, सर्वोदय-मंडल) उपस्थित थे। संमेलन की अध्यक्षता श्री वैद्यनाथ बाबू ने की। श्री जयप्रकाशजी ने अध्यक्ष-पद के लिए उनका नाम प्रस्तावित किया। स्व० अनुग्रह बाबू का भी निम्न संदेश आया था : "सर्वोदय-समाज-सेवक अपनी विचार-शक्ति द्वारा समाज में क्रांति का जागरण कर रहे हैं, यह देख कर मुझे प्रसन्नता हो रही है और मुझे विश्वास है कि अपनी इस विचार-शक्ति के द्वारा वे निकट भविष्य में ग्रामदान ही नहीं, तालुका-दान भी प्राप्त करने में सफल होंगे और सच्चा ग्रामराज्य स्थापित करेंगे।"

संमेलन के त्रिदिवसीय अधिवेशन में सर्वोदय-आंदोलन के तीन पहलुओं पर विचार हुआ : खादी-कार्य का विकेन्द्रीकरण, नयी तालीम और ग्रामदान।

खादी-कार्य के विकेन्द्रीकरण पर अपने विचार प्रकट करते हुए श्री ध्वजा बाबू ने कहा कि बिहार-खादी-ग्रामोद्योग-संघ का विकेन्द्रीकरण व्यावहारिक दृष्टि से भी अनिवार्य बन गया है। इसलिए संघ के कार्यों को ज़िला एवं थाना-स्तर की इकाइयों में विकेन्द्रित करने का निर्णय कर लिया गया है।

श्री रामशरण उपाध्यायजी ने नयी तालीम के इतिहास पर और उसके सरकारी प्रयोगों की असफलताओं पर प्रकाश डालते हुए कहा : नयी तालीम का गैरसरकारी प्रयोग स्वावलंबन के आधार पर होना चाहिए। आचार्य वर्मा ने कहा कि नयी तालीम का उद्देश्य स्वावलंबी एवं सहयोगी आधार पर एक नया मानव, एक नया समाज बनाना है। प्रो० राममूर्ति ने बताया कि नयी तालीम का लक्ष्य कलम और कुदाल में समन्वय स्थापित करना है और यह समन्वय ग्रामराज की भूमिका में ही संभव है। श्री मथुरादास भाई ने कहा कि जीवन की समस्याओं से संबद्ध होकर ही नयी तालीम अपने उद्देश्य में सफल हो सकती है। संमेलन का मुख्य विषय ग्रामदान था। श्री जयप्रकाशजी ने ग्रामदान के भिन्न-भिन्न सभी पहलुओं पर बड़ी ही गहराई से विचार प्रकट किये और उसमें जुटने का आवाहन किया।

संमेलन में उपस्थित सर्वोदय-क्रांति में संलग्न कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि सर्वप्रथम उन्हें ही अपने भूमि-स्वामित्व के विसर्जन की दिशा में कदम उठाना चाहिए और स्वामित्व-विसर्जन का संकल्प घोषित करना चाहिए। उनके ओजस्वी निवेदन से प्रेरित होकर संमेलन में उपस्थित लगभग ५० कार्यकर्ताओं ने उसी समय भूमिस्वामित्व के विसर्जन का संकल्प घोषित किया और अपने संकल्प-पत्र श्री जयप्रकाशजी के हाथों में समर्पित किये। तीन प्रार्थना-सभाओं में तीन प्रवचन हुए। वैद्यनाथ बाबू का भाषण बड़ा मार्मिक था; श्री सिद्धराजजी का विचारोत्तेजक और श्री जयप्रकाशजी का अत्यन्त प्रेरक तथा ओजस्वी।

संमेलन में कालड़ी-सर्वोदय-संमेलन के ग्रामदान-प्राप्ति संबंधी ऐतिहासिक प्रस्ताव को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक जिले में और यदि संभव हो, तो प्रत्येक थाने में एक या एक से अधिक टोलियों की मार्फत सामूहिक पदयात्रा चलाने का निश्चय हुआ। इस कार्य के लिए आवश्यक कार्यकर्ताओं की फौज तैयार करने के लिए प्रांत के विभिन्न हिस्सों में कार्यकर्ताओं के नियमित शिविर चलाने का भी निर्णय हुआ।

सर्वोदय-मंडल की बैठकें जीवनदानियों, सत्याग्रही लोकसेवकों एवं क्षेत्रीय निवेदकों की सम्मिलित बैठक एवं जिला भूदान-यज्ञ-कमिटियों के कार्यालय-मंत्रियों तथा क्षेत्रीय निवेदकों की बैठक हुई और श्री वैद्यनाथ बाबू के मार्गदर्शन में एक वितरण-योजना बनायी गयी, ताकि अवितरित भूमि का वितरण शीघ्र हो।

तंत्र-मुक्ति के बाद आंदोलन के संयोजन का प्रश्न और निधि-मुक्ति के बाद कार्यकर्ताओं के निर्वाह का प्रश्न—ये दो प्रश्न भी संमेलन के सामने उपस्थित थे। पहले प्रश्न के संबंध में श्री **सिद्धराजजी ने कहा कि तंत्रमुक्ति के बाद आन्दोलन एक तरल स्थिति (Fluid Stage) में है। अतः उसको संगठित करने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक जिले में दो-चार सक्षम व्यक्ति हमेशा घूम-घूम कर कार्यकर्ताओं से सम्पर्क स्थापित कर उनको योजनापूर्वक आवश्यक मार्गदर्शन देते रहें। बीच-बीच में कार्यकर्ताओं के शिविर भी हों।** संमेलन ने तय किया कि बिहार-सर्वोदय-मंडल हर मास अपनी बैठक करे और उसमें प्रांत भर के प्रमुख कार्यकर्ताओं के अनुभवों से लाभ उठाये।

प्रो० राममूर्ति ने मुंगेर जिले में अपनी क्रांति-यात्रा के बड़े ही आशाजनक अनुभव बताये। उनके अनुभवों का लाभ उठाने के लिए संमेलन ने तय किया कि हर जिले के कार्यकर्ता अपनी सुविधा के अनुसार कुछ दिनों तक उनकी क्रांति-यात्रा में शामिल रह कर आवश्यक अनुभव एवं शिक्षण प्राप्त करें।

कार्यकर्ताओं का निर्वाह कैसे हो, इस प्रश्न के कुछ मार्गदर्शक समाधान प्रो० राममूर्ति ने सुझाये, तो श्री जयप्रकाशजी ने संपत्ति-दान का उद्देश्य स्पष्ट किया।

संमेलन में ग्रामदान पर श्री जयप्रकाशजी का भाषण बहुत महत्त्वपूर्ण, बड़ा ही असरकारक, उत्साहवर्धक एवं मार्गदर्शक था। भाषण के फलस्वरूप कार्यकर्ताओं द्वारा स्वामित्व-विसर्जन की घोषणा एक ऐतिहासिक घटना और क्रांतिकारी चीज रही। इस घोषणा के परिणामस्वरूप जिस उत्साह की सृष्टि हुई है, उसका अगर बुद्धिपूर्वक संयोजन किया गया, तो बिहार में ग्रामदान-आन्दोलन की मुख्य प्रेरणा के रूप में वह काम करेगा। पूसा रोड का संमेलन प्रादेशिक संमेलन था, लेकिन इस एक घटना से इस संमेलन का अखिल भारतीय महत्त्व भी प्रकट हो गया है। कालड़ी में ग्रामदान-क्रांति के मंत्रद्रष्टा ने मंत्रोच्चारण किया। पूसा रोड में उस क्रांति के नेता की वाणी से वह ओज निकाला, जिसने कार्यकर्ताओं को क्रांति की पूर्णाहुति की दिशा में एक ठोस कदम उठाने के लिए प्रेरित किया। शंकर के केरल की विचार-वाणी बुद्ध के बिहार में आकर संकल्पित हुई। कल वह पूर्ण फलित भी होगी, इसमें किसको संदेह है!

—०—

www.vinoba.in

गांधी-स्वाध्याय-संस्थान

गांधी-स्मारक-निधि द्वारा संचालित पूर्वीय उत्तरप्रदेश के तत्त्व-प्रचार-विभाग द्वारा शीघ्र ही स्थापन होने वाले उपर्युक्त संस्थान की संक्षेप में जानकारी इस प्रकार है :

गांधी विचार-धारा के व्यापक और व्यवस्थित प्रचार के लिए सारे देश में गांधी तत्त्व-प्रचार-विभाग वर्षों से काम कर रहा है और अब काशी तथा प्रयाग में १ अगस्त '५७ से गांधी-स्वाध्याय-संस्थान का काम शुरू होने जा रहा है।

आज सारे देश में विनोबाजी ने अहिंसक क्रांति का प्राणस्पंदन किया है। बात अब ग्रामदान के शिखर तक पहुँच चुकी है। ग्रामदान के बाद बापू और विनोबा के कदमों पर चल कर ग्राम-रचना, ग्रामराज की स्थापना हम कैसे करेंगे, यह प्रश्न है। इसके लिए सही दृष्टि वाले समाज-सेवकों, विचारकों और प्रत्यक्ष कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। यह 'संस्थान' उसी दिशा में एक छोटा-सा प्रयत्न है।

उद्देश्य : गांधी विचार-धारा और कार्यक्रमों के सर्वांगीण ज्ञान के द्वारा मुख्यतः सुशिक्षित नवयुवकों में रचनात्मक कार्य की आकांक्षा और अभिरुचि उत्पन्न करना।

व्यवस्था और संचालक : गांधी-निधि-तत्त्व-प्रचार-विभाग, पूर्वीय उत्तरप्रदेश।

कार्यक्रम : १ अगस्त से ३१ जनवरी तक प्रतिवर्ष छः महीने का एक सत्र तथा बौद्धिक और व्यावहारिक वर्गों की व्यवस्था।

प्रारंभिक योग्यता : साधारणतः आयु २१ और ४० वर्ष के बीच की और साधारणतः बी. ए., साहित्य रत्न, शास्त्री या समकक्ष पढ़ाई।

प्रवेश : उपरोक्त योग्यता वाले शिक्षार्थियों को निर्दिष्ट आवेदन-पत्र पर १५ जुलाई के पहले केन्द्र-व्यवस्थापक या तत्त्व-प्रचार-विभाग, काशी (वाराणसी) के पास प्रार्थना करना आवश्यक होगा। आवेदन-पत्र तथा सविस्तर जानकारी मिल सकेगी।

संस्थान 'प्रमाण-पत्र' और 'प्रगति-पत्र' भी शिक्षार्थियों को देगा।

पाठ्यक्रम : संस्थान का पाठ्यक्रम बौद्धिक और व्यावहारिक, दोनों तरह का रहेगा। बौद्धिक में संपूर्ण गांधी-सर्वोदय-विचार-धारा का सर्वांगीण दृष्टि से अध्ययन, विवेचन, भाष्यादि और व्यावहारिक में कताई, बुनाई, सफाई, खाद बनाना आदि।

निधि-तत्त्व-प्रचार-विभाग, राजघाट, काशी —रामकृष्ण शर्मा, संचालक

संवाद-सूचनाएँ :

गांधी-स्मारक-निधि द्वारा पुस्तकालयों को सहायता

गांधी-स्मारक-निधि की बिहार शाखा (पटना ३) की ओर से उनकी प्रमाणित सूची के अनुसार सर्वोदय तथा गांधी-साहित्य की खरीदी पर बिहार प्रदेश के ग्रामीण पुस्तकालयों को ७५ प्रतिशत और शहरों के पुस्तकालयों को ५० प्रतिशत सहायता दी जायगी। आवेदन पत्र की दो प्रतियाँ और साहित्य की सूची मंगा ली जाय और ३१ जुलाई '५७ तक कार्यालय में पहुँचा दी जाय। —व्यवस्थापक

बंबई में सर्वोदय-संमेलन

बंबई निवासी भूदान-प्रेमी जनता और कार्यकर्ताओं का सर्वोदय-संमेलन ता. १३-१४ जुलाई को गोकलीभाई स्कूल, दादाभाई रोड, विलेपार्ले-पश्चिम में होगा। श्री नारायण देसाई भूदान-कार्य का मार्गदर्शन करेंगे। —गणपतिशंकर देसाई

सर्वोदय-संगीत-शिविर

सर्वोदय-आश्रम, पो० रानीपतरा, जि० पूर्णिया (बिहार) में ता० १५ जुलाई से २७ जुलाई तक सर्वोदय-संगीत-शिविर होगा। शिविर का संचालन कवि श्री दुखायलजी करेंगे। भोजन आदि खर्च के लिए प्रवेश-शुल्क १५) है। सुमधुर आवाज वाले कार्यकर्ता तुरंत आवेदन-पत्र भेजें।

सर्वोदय-आश्रम, रानीपतरा, पूर्णिया —व्यवस्थापक

भूल-सुधार : १४ जून '५७ के "भूदान-यज्ञ" में पृष्ठ १२ पर निवेदकों की नामावली छपी है। कृपया उसमें बंगाल के श्री वनमाली जाना का जिला **कलकत्ता** की जगह **हुगली**, और बंबई राज्य के श्री मोहनलाल मोदी का जिला **लाहौर** की जगह **हालार** पढ़ें।

ग्रामदान की गंगा में—

—मध्यप्रदेश में निमाड जिले की सेंधवा तहसील के आदिवासी ग्राम 'वझर' के ग्रामीणों ने अपनी भूमि का निजी स्वामित्व विसर्जन करके श्री बाबा राघवदासजी के सामने ग्रामदान जाहिर किया।

निमाड जिले के आदिवासी क्षेत्र में ग्रामदानी गाँवों का फिरकादान होने की बहुत संभावना है।

—बैतूल जिले की भैंसदेही तहसील में २५ मार्च को आदिवासी गाँव **मानी** का ग्रामदान घोषित हुआ। ५० घरों में लगभग २५० लोग रहते हैं। करीब २०० एकड़ भूमि ग्रामदान में शामिल है।

—गत मई-जून में विभिन्न प्रांतों में निम्न प्रकार और गाँव ग्रामदान में मिले हैं :

उत्तर प्रदेश १, केरल ४१, बंबई राज्य ५, मध्यप्रदेश ५, मैसूर ९, राजस्थान ३=कुल ६४।

ये ६४ ग्रामदान मिला कर अब ग्रामदानी गाँवों का आँकड़ा २५७३ हो गया है।

केरल-यात्रा से—

आजकल इन्फ्लूएंझा सब दूर फैल रहा है, यह तो सब जानते ही हैं। केरल में भी उसका पैर-पसारा हो गया है। यहाँ की मशहूर बारिश में १५–२० लोग बीमार होकर हॉस्पिटल में दाखिल हो गये हैं। बाबा और उनके ४–५ निजी सेवक हरि-कृपा से बचे हैं। आगे भी वही कृपा बनी रहेगी, ऐसी आशा है।

चावकाड की सभा में २० जून को बाबा ने जब उपस्थित लोगों से समाज को कुछ देने के लिए आवाहन किया, तो ६१ लोगों ने आधे घंटे का श्रमदान जाहिर किया।

केरल में द० मलबार जिले में कालीकट स्टेशन के नजदीक २८ जून को मंचेरी हम लोग पहुँचे और वहाँ से निलांबर, आरीकोड आदि स्थानों से होते हुए ११ जुलाई को कोझिकोड पहुँचेंगे। —— —महादेवी

—ता० २४-२५ मई को सौराष्ट्र के रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलन में भूदान-प्रचार किया। १२५ छात्र और शिक्षकों ने समयदान दिया। २९ मई से ५ जून तक भरुच तालुके की सामुदायिक पदयात्रा की। इस यात्रा में २ संपत्तिदान, २ श्रमदान, १७ समयदान प्राप्त हुए। एक भाई ने एक साल का समयदान दिया। प्र० स० पक्ष के नेता श्री जसवंत मेहता ने अधिकाधिक समय भूदान-यज्ञ में लगाने का तय किया। साहित्य-बिक्री हुई। सौराष्ट्र की अपेक्षा गुजरात में विषमता का भेद अधिक नजर आया। —— —वसंतभाई व्यास

श्री विनोबाजी का और श्री वल्लभस्वामीजी का डाक-तार का पता :
मार्फत : सर्व-सेवा-संघ, पो० परली PARLI (PALGHAT : KERAL)

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	सर्वोदय का कल्याण-मार्ग	जयप्रकाश नारायण	१
२.	भूदान-यज्ञ सफल कैसे हो ?	प्यारेलाल नैयर	१
३.	जीवन-परिवर्तन हरेक को करना है	विनोबा	२
४.	भूदान 'दान' नहीं, 'हक' का बँटवारा है !	विश्वनाथ प्रतापसिंह	२
५.	देश में परिव्राजक क्यों और कैसे चाहिए ?	विनोबा	३
६.	नये देवता, नयी मूर्ति और नये वाहन !	धीरेन्द्र मजूमदार	३
७.	ग्रामदान : भगवान् का काम	बाबा राघवदास	४
८.	बच्चा यों बदलता है !	महात्मा भगवानदीन	५
९.	डर पाप में फँसने का नहीं, पुण्य में फँसने का है !	विनोबा	६
१०.	सर्वोदय की दृष्टि : रूस के नये परिवर्तन !	लक्ष्मीनारायण भारतीय	६
११.	भारत की समस्या और उसका हल	कमलाकान्त वर्मा	७
१२.	ग्रामदान और ग्रामराज के मोर्चे पर	मोतीलाल केजरीवाल	९
१३.	साहित्य-परिचय	...	१०
१४.	आबू में श्री विमला बहन	—	११
१५.	द्वितीय बिहार प्रादेशिक सर्वोदय-संमेलन	सच्चिदानंद	११
१६.	आंदोलन-समाचार, सूचनाएँ आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, अ० भा० सर्व-सेवा संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी, टे० नं० १२८५

www.vinoba.in